

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_182007

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. **H82/H288w** Accession No. **671.250**

Author **DR. S. S. S. S. S.**

Title **24. 1. 1940**

This book should be returned on or before the date
last marked below.

स्वप्न-भंग

[ऐतिहासिक नाटक]

लेखक

श्री हरिकृष्ण 'मेभी'

प्रथम संस्करण]

जनवरी — १९४०

[मूल्य १॥)

प्रकाशक: —

श्री हरिकृष्ण 'प्रेमी'

वाणी-मन्दिर

अस्पताल रोड, लाहौर ।

लेखक की अन्य रचनाएँ

काव्य	नाटक
प्याँखों में	पाताल-विजय
जादूगरनी	रक्षा-बंधन
अनंत के पथ पर	शिवा-साधना
स्वर्ग-विहान (जप्त)	प्रतिशोध

मुद्रक—

श्री हरिकृष्ण 'प्रेमी'

भारती प्रेस,

अस्पताल रोड, लाहौर ।

समर्पण

आदरणीय श्री हरिभाऊ उपाध्याय को

जो स्वप्न हृदय में लेकर मैं पास तुम्हारे आया ।
वे भङ्ग होगये कवके मैं उन्हें सँभाल न पाया ।
अब बुझती हुई शिखा का उच्छ्वसल चुम्बन भेलो ।
है जलन-भरा यद्यपि यह, फिर भी करुणा कर ले लो ।

यदि स्वाद मिले कुछ इस में,
तो वूँद स्नेह भर जाना ।
जीवन देना चाहो तो
बुझने से पहले आना ।

अपरार्थी

हरिकृष्ण “प्रेमी”

कुछ बातें

भारतीय इतिहास के मुस्लिम काल में दारा के समान वैभव और शक्ति की चरम सीमा तथा कंगाली और कष्ट की पराकाष्ठा तक पहुँचने वाला पात्र दूसरा कोई नहीं है। हिंदु-मुस्लिम एकता के लिए उस महापुरुष ने अपने जीवन की बलि दे दी। उस समय दारा का जो स्वप्न-भंग हुआ वह आज तक भंग ही पड़ा है। मैंने अपने नाटकों द्वारा राष्ट्रीय एकता के भाव पैदा करने का प्रयत्न किया है। मेरे इन लघु यत्नों को राष्ट्र-यज्ञ में क्या स्थान मिलेगा, यह मैं नहीं जानता। यह नाटक भी इस राष्ट्र-यज्ञ में डाली गई एक आहुति है।

मेरा यह छठा नाटक है। मेरे पिछले 'स्वर्ण-बिहान' 'पाताल-विजय', 'रक्षा-बंधन', 'शिवा-साधना' और 'प्रतिशोध' नामक नाटकों का हिंदी-जगत् ने स्वागत कर मुझे प्रोत्साहित किया है, किंतु, मेरा जीवन अनेक संकटों में पड़ा रहा, इस कारण मैं 'भारती' के मंदिर में उत्तम रूप में और उचित मात्रा में पुष्प नहीं चढ़ा सका हूँ, इसका मुझे खेद है। मेरे हृदय में एक आग

सी सुलगती रहती है, किंतु उसे व्यक्त करने की मेरे पास अवकाश नहीं है। इस विपत्ति-काल में भी मेरी वीणा मौन नहीं है, मेरे मित्र तो इसे भी आश्चर्य के साथ देखते हैं। मैंने इन नाटकों में भाव दिए हैं, कला दी या नहीं, यह कलाविद देखें, मुझे देखने की फुरसत नहीं है। हाँ, इतना प्रयत्न तो मैं करता ही हूँ कि नाटक रंगमंच के उपयुक्त रहें, जन-साधारण की पहुँच के बाहर न हों और उनमें रसानुभूति का अभाव न हो।

इस नाटक में पात्रों की संख्या थोड़ी है। दारा, औरंगजेब, शाहजहाँ और प्रकाश पुरुष-पात्रों में तथा जहानारा, रोशन आरा, नादिरा और वीणा स्त्री-पात्रों में बार-बार रंग-मंच पर आते हैं। शुजा, मुराद, जयसिंह, जसवंतसिंह और महारानी महामाया आदि इस कथा से संबंधित अनेक पात्रों को मैं रंग-मंच पर नहीं लाया। यदि पात्रों की संख्या बढ़ा देता तो नाटक बड़ा भी हो जाता और मुख्य पात्रों का पूरा विकास भी न हो पाता। इस नाटक का घटना-काल थोड़ा ही है। दारा का सम्पूर्ण जीवन-चरित्र न अंकित कर केवल अन्तिम दिनों में उसका औरंगजेब से जो संघर्ष हुआ है, उसी को चित्रित किया गया है।

मैंने अपने अन्य नाटकों में यह नियम रखा है कि हिंदु-पात्रों की भाषा हिंदी तथा मुस्लिम पात्रों की उर्दू रखी जाय। यह नाटक इसका अपवाद है। इसके लगभग सभी पात्र मुसलमान

हैं, उनकी भाषा उर्दू रखने से नाटक हिंदी-भाषियों के काम का न रहता । उर्दू का मैं पंडित भी नहीं, इसलिए उस स्थिति में भूलें भी रह जाती ।

नाटक जैसा भी कुछ है, पाठकों के सामने है । मुझे विश्वास है कि पाठक मुझे प्रोत्साहित करेंगे ।

हरिकृष्ण 'प्रेमी'

पात्र-परिचय

प्रधान पुरुष-पात्र

- दारा ... शाहजहाँ का सबसे बड़ा पुत्र ।
औरंगज़ेब ... शाहजहाँ का आयु के हिसाब से तीसरा पुत्र ।
शाहजहाँ ... मुगल-सम्राट ।
छत्रसाल हाड़ा ... दारा का मित्र, बूढ़ी-नरेश ।
प्रकाश ... एक बूढ़ा मजदूर

गौण पात्र

मोहम्मद (औरंगज़ेब का पुत्र), शहनवाज़खाँ (औरंगज़ेब का ससुर), खलीलुल्लाहखाँ, कासिमखाँ, दिलेरखाँ, रामसिंह राठौर (चारों शाही सेना के सेनापति), एक मौलवी, एक राजपूत सेनाध्यक्ष, सैनिक, बच्चे आदि ।

प्रधान स्त्री-पात्र

- अहानारा ... शाहजहाँ की बड़ी पुत्री ।
रोशन आरा ... शाहजहाँ की छोटी पुत्री ।
नादिरा ... दारा की पत्नी ।
बीया ... प्रकाश की पोती ।

गौण स्त्री-पात्र

सलीमा (नादिरा की दासी), राधा (मालिन),
दासी, संदेश-वाहिका आदि ।

रत्न-भंग



पहला अंक

पहला दृश्य

[आगरा का किला । दारा का महल । विलास-सामग्रियों से सुसज्जित विशाल भवन के मध्य रेशम की डोरी के झूले पर रत्न-खचित स्वर्ण-पालना बिछा हुआ है । कुछ दूर एक कोने में हाथी-दाँत की बनी तिपाही पर सुराही और प्याले आदि रखे हैं । नादिरा पालने पर बैठी हुई है दासियाँ पंखा झूल रही हैं । दाहिनी ओर सलीमा वीणा पर गीत गा रही है ।]

सलीमा:—(गान)

हम जग में मुसकाती आवें,

हम जग से मुसकाती जावे,

जैसे नभ में ऊषा आती,

अवनि-गगन को लाल बनाती,

कुंज-कुंज में फूल खिलती

हम भी जग का हृदय खिलावें ।

हम जग में मुसकाती आवें ।

हम जग से मुसकाती जावें ।

चाँद सुधा बरसाता आता ।

विमल चाँदनी-सेज बिछाता ।

मन-मन में तूफ़ान उठाता ।

हम भी सुख का ज्वार उठावें ।

हम जग में मुसकाती आवें ।

हम जग से मुसकाती जावें ।

सखि, हम ऊषा-सी मुसकावें,

शशि-सा मादक रूप दिखावें,

फूलों-सी फूली न समावें,

कोयल-सी पागल बन गावें ।

हम जग में मुसकाती आवें ।

हम जग से मुसकाती जावें ।

नादिरा:—वाह सलीमा, तुम मेरी जीवन-वाटिका की कोयल हो, मेरे जीवन के सुख-दुख तुम्हारे गीतों में गूँजते रहते हैं। स्वर के निर्भर में स्नान कराने के साथ ही सुराही का लाल पानी भी तो दो।

[सलीमा गाना बन्द करके सुराही में मदिरा ढाल कर लाती है।]

सलीमा:—लोजिए ! क्या सुराही के लाल पानी में हिन्दुस्तान की होने वाली मलिका नादिरा की आँखों से भी ज्यादा नशा है।

नादिरा:—(प्याला हाथ में लेकर) नादिरा की आँखों में नशा ! (एक घूँट पीकर) सलीमा ! कोई भी नशा बहुत समय तक नहीं रह पाता ! (दासियों से कहती हैं) पालना उतार कर ले जाओ। (पालने से उतर जाती है। दासियाँ पालना उतार कर ले जाती हैं। कमरे में नादिरा और सलीमा रह जाती हैं।) हाँ, तो, सलीमा, तुम गा रही थीं। 'हम जग में मुसकाती आवें।' हम जग से मुसकाती जावें (तुम्हारा यह स्वप्न कितना सुन्दर है, किन्तु.....

सलीमा:—किंतु क्या ?

नादिरा:—यही कि सुन्दर सपने देखना पाप है ।

सलीमा:—क्यों ?

नादिरा:—शराब से भरा हुआ प्याला अचानक हाथ से छूट कर टुकड़े-टुकड़े हो जाता है । मनुष्य के स्वप्न भंग हो जाते हैं, हृदय विदीर्ण हो जाता है । हमारे अरमान आसमान को छूना चाहते हैं, लेकिन उनके पंख कमज़ोर हैं ।

सलीमा:—यानी ?

नादिरा:—कभी अमृत भी हलाहल बन जाता है । (घूंट पीकर प्याला सलीमा को देती है ।)

सलीमा:—(प्याला हाथ में लेती है) आज आपकी आँखों के आकाश के एक छोर पर बादल क्यों दिखाई दे रहे हैं ! शाहज़ादा दारा के दिल की रानी जल्दी ही हिन्दुस्तान की मलिका होगी, फिर आपके स्वर में आशंका और संदेह का कंपन कैसा ?

(नादिरा का प्याला तिपाही पर रखती है)

नादिरा:—सागर के तल और आकाश के छोर को किसने छुआ है, सलीमा ! समय की गति को किमने जाना है, सखी ! तुम मुझे शाहज़ादा दारा के दिल की रानी, भारत की भावी मलिका कहती हो । लेकिन जो इस दुनिया के

चक्र को चलाता है उसकी आँखों में दारा का, दारा की रानी का और दिल्ली की बादशाहत का क्या मूल्य है ? जैसे विराट हिमालय के सामने एक रज-कण ! अरे, उतना भी तो नहीं ! वह अपने एक इशारे से राज-महलों को मिट्टी का ढेर बना देता है । उसके सामने नादिरा.....

सलीमा:—(नादिरा का मुँह बन्द करके) यह क्या कहती हैं, आप ! सौभाग्य आपके चरण चूमता है । मुगल-सल्तनत हिमालय से भी ज्यादा मज़बूत है । आज अङ्गरेज़, फ्रांसीसी डच और पोर्चुगीज़ आदि विदेशी ताकतें उसके आगे सर झुकाती हैं । आप इस सल्तनत की मलिका हैं । आपको किस बात की चिन्ता.....

नादिरा:—चिन्ता ! चिन्ता यही कि मुझे ज़रूरत से ज्यादा सुख प्राप्त है । जहाँ फूल बहुत होते हैं, वहीं साँप भी छिप कर बैठे रहते हैं । शाहंशाह शाहजहाँ का हम पर इतना स्नेह, उन पर अन्य पुत्रों की अपेक्षा अधिक ममता क्या दुनिया की ईर्षालु आँखें चुपचाप सह लेंगी । तुम जानती हो, सलीमा, ज्यादा शराब पीने का परिणाम नशा उतरने पर बहुत बुरा होता है । स्वाभाविक और उचित.....

सलीमा:—स्वाभाविक और उचित ! शाहंशाह का दारा पर स्नेह क्या स्वाभाविक नहीं, क्या उचित नहीं ? वे उनके बड़े पुत्र

हैं। संसार ईर्ष्या करे तो करे, लेकिन शाहंशाह के स्नेह और मुगल बादशाहत के सम्पूर्ण वैभव पर शाहजादा दारा का अधिकार स्वाभाविक है और उचित भी, तिस पर राजपूत राजाओं का उन्हें विश्वास प्राप्त है। आपको आशंका क्यों ?

नादिरा:—आशंका क्यों ! आज यह सोचने की भी ज़रूरत पड़ गई है कि मुगल साम्राज्य के सम्पूर्ण वैभव और शाहंशाह के स्नेह पर हमारा अधिकार स्वाभाविक और उचित है, क्या यही बात अस्वाभाविक नहीं है, क्या यही आशंका के लिए पर्याप्त कारण नहीं है ? बोलो सलीमा ! बोलो बहन !

सलीमा:—मैं क्या कहूँ, बहन ! आपने मुझ दासी को बहन कहने का अधिकार दिया है क्या इसी से मुझ में राजनीति को समझने की योग्यता आ गई है ? मुझ से ये बातें क्यों पूछती हैं ?

नादिरा:—इसलिये कि तू गाती है—‘हम जग में मुसकाती आँवें हम जग से मुसकाती जाँवें’। लेकिन बहन, हमें अपनी मुसकान पर भी कोई अधिकार नहीं है। खुदा ने मुझे जितना सुख इस समय दे रखा है, हिन्दुस्तान की मलिका बनने पर क्या इससे कुछ ज्यादा पा सकूंगी ? सलीमा, शाहंशाह की बीमारी बढ़ती जा रही है। ऐसा जान पड़ता है, भयानक काली रात मुँह खोले चली

आ रही है, विपत्ति की आँधी क्षितिज पर प्रतीक्षा कर रही है। और सलीमा मैंने तो आज तक दुख को जाना भी नहीं। धन के बल पर ग्रीष्म की घोर दोपहरी को वसंत की मादक रात बना कर रही हूँ। अपना भी मदिरा का पात्र भरने का कष्ट मैंने नहीं किया। मेरे पैरों ने मलमल या नरम दूब से अधिक कठोर वस्तु का परिचय नहीं पाया। ऐसा जान पड़ता है कि मेरी आँखों का नशा उतरने.. ..।

सलीमा:—(बीच में ही रोक कर) रहने भी दो बहन ! कल की चिंता में हम आज को क्यों बर्बाद करें। चलो ज़रा बागीचे की मेर कर आते। (हाथ पकड़ कर ले जाती)

(पट-परिवर्तन)

दूसरा दृश्य

[स्थान—ताजमहल का सामने वाला चबूतरा। समय—संध्या। एक कोने में १५-१६ वर्ष की मालिन-बाला फूलों की माला गुंथ रही है। आकाश रक्त-रंजित है, अस्तंगत सूर्य की अंतिम किरणें संगमरमर के ताजमहल के किसी-किसी भाग को चमका कर वातावरण को मानो गूढ़ रहस्य से भर रही हैं। मालिन-बाला के भोले, सुन्दर और सुकुमार मुख पर भी दो-एक सूर्य-रश्मियाँ पड़ रही हैं।

उसके फूल से कोमल हाथ डलिया से एक-एक फूल उठा
कर माला गूँथने में निरत हैं और उसके अधर, मुसकराते
हुए, प्राणों का अबोध संगीत प्रवाहित कर रहे हैं । फूलों
की सुरभि से अधिक माधुर्य लिए उसका गीत वायुमंडल
में बह रहा है ।]

माञ्जिनः— (गाती है)

फूल जगत् में क्यों आते हैं ?

जब आते मुसकाते आते,
बन-वन में सौरभ फैलाते,
पा संदेश मधुप आ जाते,
कानों में कुछ गुन-गुन गाते ।

मधु पीकर, फिर उड़ जाते हैं ।

फूल जगत् में क्यों आते हैं ?

इन्हें देख मानव ललचाते,
तोड़-तोड़ डलिया भर लाते,
हृदय छेदकर, हार बनाते,
हार बना, फले न समाते ।

इन्हें बेचकर धन पाते हैं ।

फूल जगत् में क्यों आते हैं ।

अभी एक ही माला बन पाई है और शाहजादियों—
जहानारा और रोशनआरा—के आने का समय हो
गया ! प्रति संध्या दोनों को एक-एक माला भेंट करने
का मेरा नित्य-कर्तव्य कदाचित् आज न निभेगा ।
जहानारा ! वह स्वर्ग की देवी है—सौम्य और सुंदर—
गंगा की निर्मल धारा । वह हमें कितना प्यार करती
है—मानो हमारी स्वामिनी नहीं सहोदरा है । विश्व
के महानतम साम्राज्य के अधिपति शाहजहाँ की ज्येष्ठ-
नम और श्रेष्ठतम पुत्री जहानारा ! तुम्हें वैभव का अभि-
मान छू भी नहीं गया । (कुछ ठहर कर) तो फिर क्या
आज दूसरी माला नहीं बनेगी ! रोशन आरा ! आह !
आह, वह कितनी सुंदर है, ज्वार-भाटे की भाँति उन्मत्त,
विजली की भाँति तेज, संगमरमर के ताजमहल की
तरह उजली, यमुना की बाढ़ की भाँति वेगवती ! उसमें
आकर्षण है, जलन है, तेज है, वेग है और है ओज !
वह निर्माणा की कल्याणमयी मूर्ति नहीं, विध्वंस की
तड़ित-रेखा है । उसके कोप से मैं आज न बच
सकूंगी । क्या करूं । समझ में नहीं आता ।

(माला गूँथने में लग जाती है और गाने लगती है ।

धीरे-धीरे जहानारा और रोशनआरा का प्रवेश ।

मालिन-बाला अपने काम में व्यस्त है, मानो

उसने देखा ही नहीं कि कोई आ रहा है ।)

जहानारा:—अरी राधा !

राधा:—(हड़बड़ा कर खड़ी होकर, कोनिस करती है) हुक्म, सरकार ।

जहानारा:—आज तो माला गूँथने में ऐसी मग्न है, मानो अपने दूल्हा के लिए वरमाला बना रही है ।

राधा:—मेरा दूल्हा । आप मेरी दूल्हा हैं । (जहानारा के गले में हार डाल देती हैं । रोशनआरा की त्योंरी कुछ चढ़ जाती है ।

जहानारा:—तो राधा, तूने मुझे अपना कन्हैया बनाया है । तू सुन पाती है राधा, उस यमुना की नीली नीली लहरों में अब भी कृष्ण की बंसी बज रही है । वह आज भी 'राधा-राधा' चिल्ला रही है, राधा ! इस प्रेम के संगीत को मनुष्य अब भी समझ सके तो कैसा अच्छा हो ? (रोशनआरा की ओर देखकर) क्यों बहन, रोशनआरा, तुम इतनी उदास क्यों हो गई ?

राधा:—समझी शाहजादी साहिबा । मैं अभी माला लाती हूँ।

(राधा का प्रस्थान । जहानारा अपने गले की माला रोशन-
आरा के गले में डालना चाहती है, लेकिन रोशन-
आरा रोक देती है ।)

रोशन:—नहीं बहन जहानारा । तुम बड़ी हो, तिस पर दारा का
तुम पर अनन्य स्नेह है । यह नौकरों का कर्तव्य है कि वे
पहले दारा और जहानारा का आदर करें और बची—
खुची.....।

जहानारा:—नहीं रोशन ।

रोशन:—(बात काट कर) किंतु, यही तो उचित है । यही न्याय
के अनकूल है । मेरा दुःखी होना मेरे हृदय की दुर्बलता है—
अपराध है ! मुझे क्षमा करो ।

जहानारा:—दुत पगली ! ऐसा न कहो ! मेरा और दारा का
यह दुर्भाग्य है कि हम तुम से कुछ वर्ष पहले इस दुनिया में
आए हैं । आज संसार यदि हमारे सर पर आदर, शक्ति
और वैभव का भार लाद रहा है, तो क्या इस कारण हमें
भाई-बहनों का स्नेह खोना पड़ेगा ।

[राधा माला लेकर आती है और रोशनआरा को भेंट
करती है । रोशनआरा माला को मटक कर तोड़
देती है । राधा अनमनी-सी चली जाती है ।]

बहानाराः—रोशन, तुमने एक अबोध लड़की का दिल तोड़ दिया ।

रोशनः—दिल तोड़ दिया । यह दुनिया 'दिलों' की इतनी परवा नहीं करती । इस मालिन की लड़की ने भी तो एक दिल को खुश करने के लिए कितने फूलों के कलेजों में सुई छेदी है ।

बहानाराः—मुझे डर लगता है, रोशनआरा । तुम्हारा यह भाव देख कर मैं आशंका से काँप उठी हूँ । उधर देखो, उस किले के उस झरोखे में बैठे हुए बीमार अब्बा शाहजहाँ इस ताजमहल की ओर देखकर क्या सोच रहे हैं । देखो न, ताजमहल के भीतर मृत्यु-निद्रा की गोद में विश्राम करने वाली माँ मुमताज़बेगम क्या कह रही हैं । स्वर्ग में बैठे हुए सम्राट बाबर, हुमायूँ, अकबर और जहांगीर आज चिंता में पड़ गए हैं । ईर्ष्या वह आग है जो लोहे को भी भस्म कर देती है—वह भूकम्प है जो किलों को भी भूमिसात कर देता है । मुझे डर है हमारी पारस्परिक ईर्ष्या के कारण मुगल-साम्राज्य..... ।

रोशन—मुगल-साम्राज्य ! आशंका की वायु से काँप उठने वाले केले के पेड़ों के स्तम्भों पर साम्राज्य का बोझ नहीं टिक सकता । उसके लिए दृढ़-निश्चयी, आशंकाहीन, सुदृढ़

चरित्रवाले व्यक्ति की आवश्यकता है, जहानारा । मुगलवंश में ऐसे महाप्राण का अभाव नहीं है । मुगल साम्राज्य अडिग है, अजर है और अमर है ।

जहानारा:—यदि हमारा स्नेह अडिग, अजर और अमर बना रहा । अच्छा अब चलें ।

(दोनों का प्रस्थान)

पट-परिवर्तन

तीसरा दृश्य

[स्थान—औरंगाबाद में मुगल राजमहल । एक हाथ में तलवार और एक में कुरान शरीफ़ लिए हुए औरंगजेब आता है ।]

औरंग:—नीरस और निर्मम औरङ्गजेब ! तू किसी को प्यार नहीं करता ! तलवार और कुरानशरीफ़, तेरे जीवन के दो ही आधार हैं । तलवार तेरी जीवन-सहचरी है और कुरान शरीफ़ तेरे प्राणों का प्रकाश । तलवार के ज़ोर से कुरान शरीफ़ को हिंदुस्तान के घर-घर में पहुँचा देना और कुरान शरीफ़ के नाम पर सारे मुसलमानों की तलवारें म्यानो से बाहर कराना, यही तो तेरे जीवन का स्वप्न है । दारा, शुजा

और मुराद ये मेरी शतरंज के मोहरे हैं। ये सब किसी न किसी नशे में गक हैं। दारा दीवाना है उपनिषदों के पीछे, मुराद को शराब और सुन्दरी ही सब कुछ है, शुजा बङ्गाल के सङ्गीत में जिन्दगी को डुबो चुका है। होश में अगर कोई है तो यह औरङ्गजेब !

(मोहम्मद का प्रवेश उसके हाथ में एक लिफाफा है)

मोहम्मद—अब्बा ! आगरा से शाही फरमान आया है !

औरंगः--लाओ बेटा ! (खत लेकर पढ़ता है । पढ़ने के बाद मोहम्मद को देता है ।) तुम भी पढ़ो ! (मोहम्मद खत पढ़ता है ।) पढ़ा मोहम्मद ! इसका मतलब है हम अपनी लगी मेहनत पर पानी फेर दें । बीजापुर से घेरा उठा लें । आह ! मुगल-साम्राज्य का दबदबा अब्बा की उदात्ता और अस्थिर-चित्तता के कारण कितना कम होगया है, यह वह नहीं सोचते । शाहजहाँ जो ठहरे ! कई बार पागलपन सवार हुआ कि ईरान पर हिंदुस्तान का भण्डा फहराया जावे । कई बार मुझे, दारा को राजा जयसिंह और राजा जसवन्त-सिंह को पहाड़ी दरों को पार कर जाना पड़ा, जान लड़ानी पड़ी; लेकिन अब्बा के इरादे पानी के बुलबुले हैं । हमें हमेशा ही काम अधूरा छोड़ कर वापस लौटना पड़ा

यही हाल हमारा दक्षिण में होता रहा है । मुगलों की शक्ति पर लोग आज सन्देह करने लगे हैं, मोहम्मद !

मोहम्मदः—फिर क्या किया जाय ? बीजापुर तो अब समाप्त ही होने वाला है । वह अग्निम साँसें ले रहा है ।

औरंगः—वह समाप्त होने वाला है और वह समाप्त होगा । तुम धरा जारी रखो !

मोहम्मदः—लेकिन शाही हुक्म ।

औरंगः—वह नहीं माना जायगा । साम्राज्य के दिन के लिए वह नहीं माना जायगा ।

मोहम्मदः—लेकिन सम्राट शाह जहाँ आपके अब्बा, मेरे बाया-उनका हुक्म.....

औरंगः—मैं जानता हूँ मोहम्मद कि तुम बाप के हुक्म को आँखें मूंदकर मानना फ़र्ज समझते हो । तुम आश्चर्य करते हो कि तुम्हारा बाप अपने बाप का हुक्म क्यों नहीं मानता । लेकिन मोहम्मद तुम नहीं जानते इस आज्ञा-पत्र पर दारा के दस्तखत हैं ।

मोहम्मदः—लेकिन मोहर तो शाही है ।

औरंगः—हो । मैं शाही हुक्म मानने को तैयार नहीं । मैं अब्बा का

हुक्म मान सकता हूँ, दारा का नहीं, हरगिज़ नहीं। घेरा न उठाया जावे।

मोहम्मदः—हमें आगरा से कोई सहायता न मिलेगी !

औरंगः—न मिले ! औरङ्गजेब को इसकी कब चिन्ता है। छोटे से बीजापुर के लिये क्या सारे मुग़ल-साम्राज्य की शक्ति लगा देने की ज़रूरत है। (कुरान शरीफ़ दिखाकर) इसकी ताक़त जानते हो ! कुरान शरीफ़ के नाम पर मैं जंगल में भी सेना जमा कर सकता हूँ, नए साम्राज्य स्थापित कर सकता हूँ। यह केवल धर्म-ग्रन्थ ही नहीं राजनीतिक अस्त्र भी है।

(एक संदेश-वाहिका का प्रवेश)

संदेशः—(कोनिश करके) शाहज़ादी रोशनआरा ने यह पत्र भेजा है।

(पत्र औरंगजेब को देती है। औरंगजेब पत्र निकाल कर मन ही मन पढ़ता है।)

मोहम्मदः—आगरा से यहाँ तक तुम अकेली ही आई हो। गज़ब की हिम्मत है तुममें।

औरंगः—मोहम्मद ! बीजापुर का घेरा उठा दो ! जाओ !

मोहम्मदः—अभी तो आप.....

औरंगः—तुम आश्चर्य करते हो ! अरे यही तो राजनीति है, मोहम्मद ! पल भर पीछे क्या होगा यह किसे मालूम ! परिस्थिति के अनुसार हमें निश्चय बदलना पड़ता है ।

मोहम्मदः—राजनीति तो मैं नहीं समझता, आपका हुक्म ही मेरे लिए सब कुछ है । मोहम्मद के पास दिमाग नाम की चीज़ तो मानो है ही नहीं । वह मानो एक मशीन है, जिसे चलाने वाले आप हैं ।

(प्रस्थान)

औरंगः—अब्बा बहुत बीमार हैं ?

सन्देशः—हाँ शाहज़ादा साहब ! सल्तनत की बागडोर शाहज़ादा दारा के हाथ में है । राजपूत राजा जयसिंह, जसवन्तसिंह और छत्रसाल हाड़ा वगैरः सब दारा के साथ हैं । शाहज़ादी रोशनआरा साहिबा ने कहा है कि अगर मुगल-साम्राज्य को हिंदुओं के हाथ में जाने से रोकना चाहें तो आपका इस वक्त आगरा पहुँचना ज़रूरी है ।

औरंगः—तुम आज ही, अभी वापस लौट जाओ । मुझे पहुँचने में देर लगेगी । रोशनआरा से कहना, मैं मुराद को भी साथ लेकर आता हूँ । मेरे आने से पहले वह भी कुछ काम करें ।

वह जितने मुगल और दूमेरे मुमलमान सरदारों को दारा के खिलाफ उभाड़ सके उभाड़े !

सन्देशः—बहुत अच्छा । (सलाम करके प्रस्थान)

औरंगः—संसार के सब प्राणियों के स्नेह से वंचित, औरंगजेब ! तुम्हें वहन रोशनआरा के अतिरिक्त कोई और भी प्यार करना है ? नहीं । रोशनआरा का स्नेह मेरे मरुभूमि से जलते हुए जलहीन जीवन का एक मात्र सरोवर है । वह क्रयामत से भी ज्यादा तेज लड़की, वह तलवार से भी ज्यादा तीखी धार वाली लड़की वह बिजली से भी अधिक ज्योतिष आँखों वाली लड़की, आज औरंगजेब को सर्वनाश की आग लगाने को कह रही है । मैं मन्त्र-मुग्ध साँप की तरह उस सपेरिन के इशारे पर नाचूँगा । जो वह कहेगी वही करूँगा । दारा—बादशाह का सबसे बड़ा पुत्र दारा—आज वह बादशाह है और औरंगजेब मामूली सूबेदार । यह अन्याय है । अब्बा ने औरंगजेब के लिए हमेशा रणभूमि और दारा के लिए विश्राम-भवन को चुना है—उन्होंने औरंगजेब को सदा ही अपनी स्नेह-छाया से निर्वासित कर रखा है और उनके जीवन की अंतिम घड़ियों में उनका यह अन्याय सीमा से बढ़ गया है । अच्छा शाहजहाँ, तुमने रणभूमि में भेज भेज कर औरंग-

जेव को काफ़ी कठोर और मज़बूत बना दिया है। जीवन के अन्तिम दिनों में तुम अपने विरोधी पुत्र की शक्ति देखते जाओ ! दारा बादशाह होगा—वह काफ़िर ! कुरान शरीफ़ ! अब तुम्हारी आवश्यकता आ गई है—तुम मेरी तलवार की ताक़त हो—तुम मेरी तलवार हो। तुम मेरी किस्मत हो, तुम मेरा इतिहास हो !

(प्रस्थान)

पट-परिवर्तन ।

चौथा दृश्य

[स्थान:—ताजमहल का सामने वाला चबूतरा ।

प्रकाश ताजमहल की ओर मुँह किये बैठा है ।

आँखों से आँसू बह रहे हैं । उसकी १३-१४

साल की पोती जिसका नाम बीणा है

फन्वारे के पास बैठी हुई गा रही

हैं । समय—रात्रि । पूर्णिमा

की चाँदनी छिटक

रही है ।]

बीणा:—(गाती है ।)

कौन गरीबों का रखवाला ।

राज-पाट, धन-वैभव वाले,

सोते दे कानों पर ताले,

पड़े हमें रोटी के लाले,

जलती है प्राणों में ज्वाला ।

कौन गरीबों का रखवाला ।

हमने श्रम कर बाग़ लगाए ।

हमने श्रम कर महल बनाए ।

हमने सर दे राज्य जमाए ।

बदले में पाया विष-प्याला ।

कौन गरीबों का रखवाला ।

(बीणा का गाना धीमा पड़ जाता है । वह पानी को बार-बार हाथों में लेकर नीचे छोड़ती है ।)

प्रकाश:—(मानो किसी स्वप्न से जाग कर) जीवन के वे सुनहले दिन ! सम्राट शाहजहाँ के हृदय में जैसा प्रेम का अथाह समुद्र लहराता था मेरे हृदय में भी वैसा ही एक महासिंधु न्याकुल था ।

मेरा मन पागल तरङ्गों में किधर बहा जाता था, इसका मुझे भी अनुमान न था । उसने अपने प्रेम-परिपूर्ण हृदय-वेदना की पत्थर की तस्वीर दुनिया की कठोर छाती पर खींच दी है, किंतु मेरे स्वप्नों का तरल ताजमहल मेरे आँसुओं के प्रवाह में बनता और बह जाता है । गरीबों के दुख को न कोई जान पाता है, न कोई उसे महत्व देता है । गरीबों की वेदना का संसार में मूल्य ही क्या ? आह, मेरा बेटा (कंठावरोध और अश्रु-प्रवाह ।)

वीणा:—(दूसरा गीत छेड़ती है ।)

हमारे भी दिल होता है ।

यहाँ भी उठता उर में ज्वार ।

विकल प्राणों में हाहाकार ।

आँसुओं का आकुल अभिसार ।

धूल में मोती बोता है ।

हमारे भी दिल होता है ।

(दारा का प्रवेश । प्रकाश उसी भाँति तल्लीन बैठा

है । वीणा बार-बार, 'हमारे भी दिल होता

है ।' पंक्ति को दोहराती है और चुप

हो जाती है)

दारा:--चाँदनी रात की इस उज्ज्वल आभा में ताजमहल कैसा चमक रहा है । विश्व के चिरन्तन प्रेम का एक अमर और सुन्दरतम अश्रु है यह । अब्बा ! विश्व के इतिहास में तुम 'प्रेम के पेगावर' के रूप में सदा जीवित रहोगे । ताजमहल के रूप में तुम्हरी अन्तर्वेदना सदा दैदीप्यमान रहेगी ।

बीणा:--(तान छेड़ती है)

हमारे भी दिल होता है ।

दारा:--नीरव रात्रि में यह करुण स्वर हृदय में तीर की तरह चुभ रहा है । कितना अवसाद है इस अवोध संगीत में ? (प्रकाश की तरफ देख कर) और यह कौन भला आदमी मूर्ति की भाँति अचल बैठा है । जैसे किसी ने वेदना की प्रतिमा तैयार की हो । (पास जाकर) तुम रो रहे हो वृद्ध पुरुष । रोने के लिए तुम्हें भी यही स्थान मिला है ।

प्रकाश:--ताजमहल मेरे जीवन का तीर्थ-स्थान है । यहाँ आकर मेरे प्राणों का संयम बह पड़ता है । जी चाहता है इस निष्ठुरता की प्रतिमूर्ति ताजमहल को आँसुओं की बाढ़ में बहा दूं ।

दारा:--निष्ठुरता की प्रतिमूर्ति ताजमहल ! यह तुम क्या कहते हो । संसार की कोमलतम भावना का यह उज्ज्वलतम

स्मारक तुम्हारे लिए निष्ठुरता की प्रनिर्भूति है। ताजमहल तुम्हारा तीर्थ-स्थान है और आँसुओं की बाढ़ में तम उसे बड़ा देना चाहते हो। कैसी विचित्र बातें कर रहे हो तुम ! ताजमहल से तुम्हारा क्या सम्बन्ध है ?

प्रवाशः—ताजमहल से मेरा क्या सम्बन्ध है ? हः हः हः ! अरे भाई, गरीबों का किसी से क्या सम्बन्ध है, इसे जानने को कोई क्यों लालायित हो ? अमीरों का निर्दय वैभव-रथ हम निर्धनों की आकांक्षाओं को चकनाचूर करता हुआ धड़-धड़ाता चलता ही रहता है, ओ युवक ! तुम इस पचड़े में क्यों पड़ते हो ? (आँखों में आँसू छलछला आते हैं ।)

दासः—रोते क्यों हो, वृद्ध पुरुष ! मैं जानता हूँ तुम बहुत दुखी हो !

प्रवाशः—तुम पहले आदमी हो, युवक, जिसने मुझे दुखी कहा है। धनवान अपना दुख ताजमहल की भाँति संसार की आँखों में अङ्कित कर जाते हैं—कवि अपनी वेदना काव्यों में लिख जाते हैं। किंतु हम निर्धन मजदूर—जिनके पास न धन है, न विद्या—शून्य से ही आत्म-निवेदन करते हैं। हमारी सदानुभूति में किसकी आँखों में आँसू आवेंगे ? गरीब तो वह रेगिस्तान हैं जहाँ प्रकृति के बादल भी नहीं आते, आते हैं तो बरसते नहीं, जो दो-चार बूंदे पाकर भी धन्य हो जाते हैं।

दारा:—किसी की आँखों में तो आवेंगे, बाबा । ऐसे दिल भी दुनिया में हैं । बसुधा को जितना समझा जाता है, वास्तव में वह उसनी कठोर नहीं है । पृथ्वी के अन्तस्तल में आग भी है पानी भी । घन बिजली भी गिराते हैं तो जल भी बरसाते हैं । तुमने यह तो बताया ही नहीं कि ताज-महल से तुम्हारा क्या सम्बन्ध है ? मैं इसलिए पूछता हूँ कि मेरा भी इससे कुछ सम्बन्ध है ?

प्रकाश:—तुम कौन हो, युवक ?

दारा:—जिसकी स्मृति में सम्राट शहजहाँ ने यह ताजमहल बनवाया है उस मुमताज बेगम का सबसे बड़ा पुत्र ।

प्रकाश:—(आश्चर्य चकित होकर) युवराज दारा ! मेरा भी एक बेटा था युवराज, ठीक तुम्हारी ही उम्र का । इसी ताजमहल के बनाने में उसकी जान चली गई । उधर देखो । जब वह बड़ी गुम्बज बन रही थी, तब एक बड़ा भारी पत्थर आकर उसके सर पर गिरा और वह सदा के लिए सो गया ।

दारा—बड़े दुःख की बात है, बाबा ! फिर भी धैर्य रखना मनुष्य का धर्म है ।

प्रकाश:—धैर्य ! हाँ युवराज, धैर्य रखना ही पड़ता है । यह जीवन का बोझ ढोना ही पड़ता है । आप वैभव-सम्पन्न व्यक्ति ताज-

महल बना कर संसार से कहते हैं, हम बड़े दुखी हैं, किंतु हम मजदूर अपने दुख को—आत्म-वेदना को हृदय के कब-रिस्तान में दफनाए रखते हैं। हम दूसरों के सुख-दुख की तस्वीरें बनाने में जीवन बिता देते हैं। संसार वैभव-शालियों के दुख को देखता है। अभाग्य के शिकार, अभागे लोगों के दुखों को कौन जानता है ?

बीणा:—(सहसा बीच में ही तान छोड़ती है ।)

हमारे भी दिल होता है ।

दारा—तुम सब कहते हो बाबा ! आज सामाजिक व्यवस्था बड़ी त्रुटि-पूर्ण हो गई है। मनुष्य-मनुष्य के बीच भेद-भाव की दीवारें खड़ी हो गई हैं। हम एक-दूसरे के दुख में भाग लेने के मानव-धर्म को भूल गए हैं। स्नेह और सहानुभूति के उच्चतम मानवीय गुण आज मूर्खता के लक्ष्य समझे जाते हैं। जिनके पास शक्ति और धन है उनके हृदय से मानों मनुष्यता नष्ट हो गई है। वे अपनी वासना के बन्दी बन गये हैं।

प्रकाश:—मैं स्वप्न तो नहीं देख रहा हूँ। भारत के भावी सम्राट के मुँह से मैं यह क्या सुन रहा हूँ ?

दारा—मेरे मुँह से ये बातें असंजत जान पड़ती है, किंतु, सुनो,

वृद्ध पुरुष, मैं सम्राट नहीं मनुष्य बनना चाहता हूँ। मनुष्य रहकर सम्राट बनना चाहता हूँ। सम्राट बनकर मनुष्यों को मनुष्य बनाना चाहता हूँ। मैं धनी-निर्धन, विद्वान-अविद्वान, और छोटे-बड़े का भेद मिटाना चाहता हूँ। मैं चाहता हूँ कि संसार एक मजदूर के पुत्र की मृत्यु का दुख भी उतना ही अनुभव करे जितना कि वह शाहजहाँ की पत्नी की मृत्यु का करता है।

प्रकाश:—स्वप्न बहुत सुन्दर है, किन्तु सुन्दर स्वप्न बहुत कम पूरे होते हैं। इतनी सुन्दर बात कहते हुए तुम्हें डर नहीं लगता युवराज ! आकाश में बादल घिर आवेंगे, बिजली कड़कने लगेगी।

बीणा —(गाती है।)

हमारे भी दिल होता है ।

दारा—यह लड़की कौन है ?

प्रकाश—बीणा, मेरे पुत्र का एक मात्र स्मृति-चिह्न ! मेरी पोती !

दारा:—बीणा ! जैसा नाम है वैसा ही इसका स्वर है ! तुम्हारा क्या नाम है ?

प्रकाशः—प्रकाश !

द्वाराः—तुमने मेरे जीवन पर नया प्रकाश डाला है ।

प्रकाशः—वीणा ओ वीणा (बालिका वृद्ध के पास आ जाती है)
अच्छा अब हम जाते हैं, युवराज !

द्वाराः—कहाँ जाओगे, बाबा ! तुम मुझे अपना पुत्र समझो, मेरे साथ चलो । तुम्हारे रहने-खाने-पीने का प्रबन्ध कर दिया जावेगा ।

प्रकाशः—नहीं युवराज ! मैं तुम्हारे साथ नहीं जाऊँगा । संसार में मुझ जैसे कितने अभागो हैं—तुम किन-किन के पुत्र बनोगे ? किन-किन के कष्ट दूर करोगे ? संसार में जितना दुख है उसको दूर करने की शक्ति भगवान के अतिरिक्त किसी में नहीं । भगवान् तुम्हारी इच्छाएँ पूरी करे । चलो वीणा ।

(प्रकाश और वीणा का प्रस्थान)

द्वाराः—वह ठीक कहता है । व्यक्तियों के दुख दूर करने से क्या होगा । घुन तो सम्पूर्ण समाज के मूल सिद्धान्तों में लगा हुआ है । धन और शक्ति प्राप्त करने की लालसा ने संसार को नरक बना दिया है । ईर्ष्या, द्वेष, हिंसा और प्रतिहिंसा

प्रत्येक हृदय में घर कर चुके हैं। यह सब कैसे दूर होगा। आज हमारे ही घर में गृह-युद्ध की भयानक तैयारियाँ हो रही हैं। अब्बा की बीमारी का समाचार पाकर शुजा बङ्गाल से सेना लेकर चल पड़ा है। औरङ्गजेब और मुराद मिलकर दक्षिण से आ रहे हैं। क्या इस भयानक हिंसा को रोका न जा सकेगा। यदि मैं रङ्गमञ्च से हट जाऊँ तो भी ये तीनों परस्पर लड़ेंगे। इसके बाद जो भी रहेगा साम्राज्य का रथ आगे हाँकेगा, जिसके नीचे कितने ही बेकसों के हृदय चकनाचूर होंगे। नहीं मैं ऐसा न होने दूँगा। मुझे समाज की व्यवस्था बदलने के लिये शक्ति चाहिये। वही शक्ति हस्तगत करने के लिए मुझे भाइयों से लड़ना ही पड़ेगा।

(प्रस्थान)

पट — परिवर्तन

— — —

पाँचवाँ दृश्य

[स्थान: — आगरा का राज महल। रोशनआरा का कमरा। कमरा

खूब सजा हुआ है। एक तिपाही पर सुराही और प्याला

रखा है। रोशनआरा हाथ में नंगी तलवार लिए

घूम रही है।]

बोशन:-

(गान)

मैं हूँ महाप्रलय की ज्वाला ।

चाहा जग ने मुझे दधाना,
चाहा मुझको राख बनाना,
चाहा पैरों से ठुकराना,
उसने मुझे नहीं पहचाना ।

मैंने पी प्रतिहिंसा हाला ।

मैं हूँ महाप्रलय की ज्वाला ।

चिन्ता क्या गिरि पथ में आवे,
वैरी सर पर बज्र गिरावे,
मेरी अभिलाषा की लपटें,
अब जग का अभिमान जलावे ।

मेरा हृदय हुआ मत्तवाला ।

मैं हूँ महाप्रलय की ज्वाला ।

सुन्दर सोने का जग प्यारा,
उसको मैं मरघट-सा कर दूँ ।

आज जगत के अणु-अणु में मैं

सर्वनाश का खर स्वर भर दूँ ।

मुझको कौन रोकेने वाला ।

मैं हूँ महाप्रलय की ज्वाला ।

ईश्या की आँधी में उड़कर मैं कहाँ आ गई हूँ । मैं नारी हूँ । नारी का अस्तित्व प्रेम करने के लिए है, संसार को स्नेह के निर्मल भरने में स्नान कराने के लिए है। मैं अपना स्वाभाविक धर्म छोड़कर हिंसा का भयानक खेल खेलने चली हूँ । कोई दिल में बार-बार कहता है, “रोशनआरा, ज़रा दिल में सोच । आगे कदम बढ़ाने के पहले उसके परिणामों पर विचार कर ।” लेकिन हृदय में प्रतिहिंसा जो कोहराम मचा रही है, उसके आगे यह धीमी आवाज़ ‘नक्कारखाने में तूती’ के समान सुनाई नहीं देती । दारा और जहानारा सम्राट के सम्पूर्ण स्नेह, जनता की सम्पूर्ण भक्ति और शासन के सम्पूर्ण अधिकार के स्वामी क्यों हों और रोशनआरा को राजभवन के साधारण मजदूरों से भी अपमानित क्यों होना पड़े ? धिक्कार है ऐसे जीवनको ! मैं बड़ घास का तिनका नहीं हूँ जिसे चाहें कोई भी कुचल जावे और जो प्रतिवाद-स्वरूप अपना सर भी न उठावे ।

मैं बह काँटा भी नहीं जो थोड़ा-सा खून पीकर सन्तुष्ट हो जावे । मैं बह छोटी सी चिनगारी हूँ जो समय पाकर महा-प्रलय की ज्वाला बन जाती है । भाई औरंगजेब ! हाँ, वही मेरे स्वप्नों का एक मात्र सहारा है । केवल उसीने अपने हृदय का सम्पूर्ण स्नेह मुझ पर न्योछावर किया है । हम दोनों ही सदा से 'घर भी और बाहर भी' स्नेह और विश्वास से वंचित रहे हैं, इसी लिए तो आज हमारे घायल हृदय एक दूसरे के इतने निकट हो गए हैं कि पाप और पुण्य दोनों में हमारे कदम साथ-साथ उठेंगे । वह भयंकर आँधी बनकर बाहर से आ रहा है और मैं भीषण ज्वाला बनकर अन्तःपुर से बाहर की ओर बढ़ रही हूँ । आज इस आँधी और आग में मुगल-साम्राज्य के वर्तमान अभिमानी अधिकारी शाहजहाँ, दारा, जहानारा और छात्रसाल हाड़ा आदि जलकर भस्म हो जावेंगे ।

(एक दासी का प्रवेश)

दासी:—(कीर्तिशंकर के) सरदार कासिम खाँ आए हैं !

रोशन:—उन्हें अन्दर भेज दो ।

(दासी का प्रस्थान)

मूर्ख दारा । तुम हिन्दुस्तान के साम्राट बनोगे । औरंगजेब और मुराद को रोकने के लिए तुम महाराजा जसवंतसिंह

को भेज रहे हो। वह अभिमानी राजपूत ! एक बार इच्छा तो हुई थी कि उसे भी आँखों की शराब पिला कर पथ से विचलित कर दूँ, किन्तु साहस नहीं हुआ। उसे पथ-विचलित चाहे न कर पाऊँ, विफल तो कर ही सकूंगी। सरदार कासिम खाँ भी उसके साथ जा रहा है। मुझे विश्वास है कि मैं उसे अपनी ओर मिला सकूंगी। थोड़े से राजपूतों को छोड़कर ऐसा कौन है जो रोशनआरा के हाथ से प्याला लेने में अपना सौभाग्य न समझे।

(कासिम खाँ का प्रवेश ।)

कासिमः—आदाब शाहजादी, साहिबा ! आज मेरी किस्मत का सितारा—

रोशनः—इसलिए चमका कि मुझे आपकी ज़रूरत पड़ गई। आप तो इस कमरे में आते ही शायर बन गए। मैं तो सम्मत्ती थी यह बीमारी सिर्फ जहानारा में है। बैठिए खाँ साहब। (हाथ पकड़ कर बैठाती है ।) मैं ने आपको एक खास काम के लिए बुलाया है।

कासिमः—बंदा हाज़िर है। बंदे की जान भी हाज़िर है।

रोशनः—जान की मुझे ज़रूरत नहीं है। आप नहीं जानते कासिम खाँ कि मुझे आपका कितना खयाल है। मैं आप का अपमान नहीं सह सकती !

कासिमः--मेरा अपमान ! किसने मेरा.....

रोशनः--हः हः हः अपना अपमान देखने की आँखें भी आपके पास नहीं है, भोले सरदार । आप नहीं जानते कि शाहजहाँ और दारा ने औरंगज़ेब और मुराद के खिलाफ़ जो फ़ौज भेजी है उसके सेनापति के पद पर सरदार कासिम खाँ को न रख कर जसवतसिंह को क्यों रखा गया है !

कासिमः--हूँ !

रोशनः--हूँ क्या ? सम्राट और दारा को मुसलामनों का ज़रा भी विश्वास नहीं । जयसिंह, जसवंतसिंह और छत्रसाल हाड़ा आदि को ही सारे काम सौंपे जाते हैं । क्या कासिमखाँ के हाथों में ताकत नहीं है ?

कासिमः--यह मैंने पहले नहीं सोचा था ।

रोशनः--तो अब सोचने का वक्त आ गया है और अगर इस वक्त न सोचेंगे तो फिर सोचने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी ।

(उठकर शराब का प्याला भरने लगती है)

कासिमः--जैसे मैं आज तक सो रहा था । हम जो पीढ़ियों से मुगल-साम्राज्य के लिए खून बहाते आए हैं, आज पराए बन गए और हिंदू जो कल तक मुगलों की जड़ खोदते थे इतने विश्वास-पात्र बन गए !

रोशनः—(मुसकराकर शराब का प्याला बढ़ाती है ।) लीजिए, सरदार । इसकी मदद से आप ठीक सोच सकेंगे !

कासिमः—(प्याला ले कर पीता है ।) हूँ !

रोशनः—आपकी समझ में आया कि आपका अपमान किया गया है ।

कासिमः—अच्छी तरह । मैं सम्राट का हुक्म नहीं मानूंगा !

रोशनः—यानी !

कासिमः—मैं जसवंत सिंह के साथ नहीं जाऊंगा ।

रोशनः—इससे मुझे क्या लाभ होगा और आपके अपमान का भी क्या प्रतिकार होगा ?

कासिमः—फिर आप क्या चाहती हैं ?

रोशनः—जसवंतसिंह के साथ जाना होगा !

कासिमः—अपमान का घूंट पीकर !

रोशनः—बदला लेने के लिए !

कासिमः—किससे ? जसवंत सिंह से !

रोशनः—जितनी शक्ति शरीर में है उतनी ही बुद्धि आपके मस्तिष्क में होती तो क्या बात थी ? जसवंतसिंह से कैसा

बदला ! बदला लेना है — जहानारा से, दारा से ! इन्होंने तो हम मुगलों को हिन्दुओं का दास बना कर रखा है । अपने वास्तविक शत्रु को न भूलो, सरदार ! जड़ पर चोट करने से डालियाँ और पत्ते तो आप ही नष्ट हो जावेंगे ।

कासिम:—तो मैं जसवन्तसिंह के साथ जाकर क्या करूंगा । मैं यहीं रह कर विद्रोह का झंडा खड़ा किए देता हूँ । दारा की जगह आपको तख्त पर.....।

रोशन:—मुझे तख्त का मोह नहीं है और मुझे तख्त पर बैठाना इतना आसान नहीं है । मैं कहूँ वैसा करिए । आप जसवन्तसिंह के साथ जाइए । उसे यह मालूम न हो कि आप उसके विरुद्ध हैं । ठीक लड़ाई के वक्त आप औरंग-जेब से मिल जाइए ।

कासिम:—धोखा ।

रोशन:—धोखा ! हः हः हा ! यह राजनीति का धर्म है धोखा नहीं । अपना लक्ष्य शुभ होना चाहिए । साधन चाहे जैसा हो । चलो ज़रा बाग की सैर कर आवें ।

(हाथ पकड़ कर ले जाती है ।)

पट-परिवर्तन ।

दृश्य छठा

[स्थानः--आगरा का दीवानेखास । तख्तेतऊँ पर
शाहजहाँ बैठा है । दाहिनी ओर बैठा हुआ दारा शाहजहाँ
को सहारा दिए हुए हैं । उसके बाद छत्रसाल हाड़ा
तथा अन्य राजपूत राजा और सरदार बैठे हैं ।
बाईं ओर दिलेरखाँ, रुस्तमेजंग, खलीलुल्लाहखाँ
आदि मुसलमान सरदार बैठे हुए हैं]

खलीलुल्लाहः—शाहंशाह !

शाहः—बोलो, खलीलुल्लाहखाँ, रुक क्यों गए ?

खलीलुः--रुक इसीलिये गया कि मेरी बात आपको अच्छी
नहीं लगेगी ।

शाहः--मुगल-शासन में अपने विचार प्रकट करने का
अधिकार सब को है । आप तो साम्राज्य के स्तंभ...

खलीलुः--साम्राज्य के स्तंभ ! नहीं सम्राट, इन स्तंभों की सम्राट
को अब आवश्यकता नहीं रही ! आवश्यकता थी बादशाह
बाबर को जिनके साथ हमारे बुजुर्ग मध्य एशिया से लेकर
हिन्दुस्तान तक मारे-मारे घूमे थे, जब कि घोड़ों की पीठ
ही हमारे ओर आपके पूर्वजों की समान रूप से सुख-सेज
थी । अब वक्त बदल गया है । आज सहस्रों मंगोल, तूरानी,

ईरानी, अफ़ग़ानों और अरबों के खून से मुग़ल-साम्राज्य की नींव सींची जाकर सुदृढ़ हो गई है। अब साम्राज्य को हमारी क्या ज़रूरत है ?

शाह:—यह तुम क्या कहते हो, खलीलुल्लाहखाँ !

खलीलु:—मैं सच कहता हूँ, जहाँपनाह ! कौन कहता है कि आज मुग़ल हिन्दुस्तान के शासक हैं। आज हम हिन्दुओं के आश्रित जी रहे हैं—उनके हाथ की कठपुतली बने हुए हैं। आज हम अपनी वह ताकत भूल गए जिससे मध्य एशिया से लेकर यूरोप के अन्तिम छोर तक मुस्लिम तलवार की धाक जम गई थी। आज हर बात में हम हिंदुओं का मुँह ताकते हैं। हम पराधीन हैं।

शाहजहाँ:—पराधीन ! प्रेम से मनुष्य को जीत लेना क्या पराधीनता है। तलवार से साम्राज्य जीते जाते हैं, लेकिन प्रेम से स्थिर रखे जाते हैं। हिन्दुस्तान के बादशाह को हिन्दू बन कर रहना होगा न मुसलमान। उसे केवल मनुष्य बन कर रहना होगा। आप क्या कहते हैं, दिलेरखाँ !

दिलेरखाँ:—आप ठीक कहते हैं शाहंशाह ! महाप्राण अकबर ने हिन्दुओं और मुसलमानों की एक सम्मिलित शक्ति से सारे संसार में हिन्दुस्तान की विजय-पताका फहराने का जो

स्वप्न देखा था वह कुछ अबोध मुसलमान सरदारों के संकुचित विचारों के कारण नष्ट हुआ जा रहा है ।

दारा--और मुझे इस बात का खेद है कि यह विष का बीज औरंगजेब द्वारा मुसलमान सरदारों के दिलों में बोया गया है । जिस दिन पहली बार उसने बुन्देलखंड के कुछ मंदिरों को तुड़वाया था मुझे तो उसी दिन जान पड़ा था कि कोई मुगल-साम्राज्य की नींव के पत्थर उखाड़ रहा है ।

खलीलुः--ऐसा क्यों !

दाराः--ऐसा क्यों ? हिन्दू भोले हैं जो आज भी मुगल-साम्राज्य के लिये वे जान देने को प्रस्तुत हैं । दूर क्यों जाते हो मेरे पास बैठे हुए रण-केशरी वीरवर छत्रसाल हाड़ा को ही देखिए । इन्होंने किस लिये हमारे लिये ५२ युद्धों में सफलतापूर्वक तलवार चलाई । इसमें इनका क्या स्वार्थ था ? जो हिन्दू मुगलों की ओर से अफ़ग़ानिस्तान और ईरान में विजय पा सकते हैं, वे यदि संगठित हो सकें तो क्या मुगल साम्राज्य का अस्तित्व खतरे में नहीं डाल सकते । यहाँ पर तो हिन्दुओं और मुसलमानों को एक होकर ही रहना उचित है !

शाहजहाँः--तुम ठीक कहते हो, दारा । गुण किस जाति में

नहीं हैं, फिर हिन्दुओं की संस्कृति तो संसार की सब से प्राचीन संस्कृति है। इस सुस्संस्कृत देश पर हम मुसलमान बन कर राज्य नहीं कर सकते।

दिलोख़ाँ:—और उनकी संस्कृति न केवल पुरानी है बल्कि सबसे श्रेष्ठ भी। भरत और राम का प्रेम हम लोगों में कहाँ है ? सम्राट की बीमारी का समाचार पाते ही शुजा बंगाल से, औरंगजेब और मुराद दक्षिण से विद्रोह का झण्डा खड़ा कर चल पड़े !

शाह: - यह सब क्या हो रहा है ! कुछ भी समझ में नहीं आता। चारों ही लड़के मेरे कलेजे के टुकड़े हैं—मेरे जीवन का प्रकाश हैं। मैं किसका मंगल और किसका अमंगल चाहूँ। मैंने महाराजा जसवंतसिंह को औरंगजेब और मुराद को और महाराजा जयसिंह को शुजा को समझा-बुझा कर शांत करने के लिए भेज दिया है।

दारा:—लेकिन क्या वे समझाने से समझेंगे ? उन्होंने आपकी आज्ञा का अपमान किया है। उन्हें दण्ड.....

शाह:—दारा ! वे तुम्हारे भाई हैं। उन्हें दंड देने की बात तुम्हारे दिमाग में कैसे आती है ? जिसकी स्मृति में मैंने ताजमहल खड़ा किया है, बेटा, तुम चारों उसी की प्रतिच्छाया हो। मेरे लिए तम सब बराबर हो।

छत्रसाजः—लेकिन, दारा युवराज हैं। आपके सबसे बड़े पुत्र हैं—सबसे अधिक योग्य हैं। शाहजादा औरंगजेब ने स्वार्थ के लिए हिंदू मुसलमानों का प्रश्न खड़ा किया है। वह युवराज दारा को काफिर कहकर इन्हें इनके उचित अधिकार से वंचित करना चाहते हैं। उनका अपराध साधारण नहीं है। जिसके हाथ में राज-दंड है उसे पुत्र को भी क्षमा करने का अधिकार नहीं। उसका न्याय-दंड स्वजन और परजन दोनों पर समान प्रहार करता है।

शाहः—तो छत्रसाल जी आप इस भाई-भाई के युद्ध को प्रज्ज्वलित करना चाहते हैं ?

खलीलुः—ऐसा होने से हिंदुओं के पौ बारह जो होते हैं। मुगल-शक्ति गृह-युद्ध से निर्बल हो जाय, यही तो ये चाहते हैं।

छत्रसाजः—सावधान, खलीलुल्लाह खाँ साहब ! राजपूत धोखा नहीं देता, षडयंत्र नहीं रचना और बेईमानी नहीं करता। वह जो ठीक समझता है कहता है, जो उचित जानता है करता है। आज तक हमने मुगल राजवंश को अपने से भिन्न नहीं माना—अपना मान कर, अपना रक्त पिलाकर उसके गौरव को बढ़ाया है। उसे नष्ट कर हिंदू राज्य स्थापित करने की अभी आवश्यकता नहीं जान पड़ी। जब तक

सिंहासन पर सम्राट शाहजहाँ और दारा जैसे व्यक्ति आसीन रहेंगे तब तक ऐसी आवश्यकता नहीं पड़ेगी ।

शाहः—शांत हाड़ा जी, आपका उपकार मुग़ल-राजवंश कभी न भूलेगा । लेकिन वर्तमान संकट का इलाज.....

छत्रसालः—इलाज ! सम्राट, राजपूत के पास सब रोगों की औषधि है, उसकी तलवार ! जो न्याय का अपमान करता है, चाहे वह बाप हो, चाहे बेटा, उसे इसका वार सहना ही पड़ेगा ।

खलीलुः—किसी एक व्यक्ति के मानापमान के लिए सारे मुग़ल-साम्राज्य को रक्त में रँगने की मैं जरूरत नहीं समझता । मेरी राय में, आप औरंगज़ेब को आने दीजिए । क्या बाप का प्यार उनके दिल से सिंहासन की भूख को नहीं मिटा सकेगा ।

शाहः—यही तो मैं सोचता हूँ । दारा तुम उन्हें आने दो । वे अपने बूढ़े और बीमार बाप के आँसुओं की उपेक्षा न कर सकेंगे । मैं अपने हाथ से अपना राजमुकुट उतार कर उनके चरणों पर रख दूंगा और फिर तुम्हारे लिए माँग लूंगा । क्या वे अपने बाप को यह भीख न देंगे ? बोलो, दारा, तुम क्या कहते हो ?

दारा—अब्बा, क्या आपने मुझे इतना लालची समझा है कि तुच्छ राजमुकुट के लिए भाइयों पर तलवार उठाऊँ। मैं क्या कहूँ, अब्बा ! मैं इन झगड़ों से दूर रहना चाहता हूँ। मुझे उपनिषदों के अध्ययन में जो आनन्द मिलता है वह इन राजकीय झगड़ों में कहाँ है ! लेकिन जब मैं यह सोचता हूँ कि औरंगजेब धर्म के नाम पर मनुष्यता का अपमान कर रहा है तो मुझे बहुत दुख होता है। मैं यह भूल जाता हूँ कि वह मेरा भाई है। मनुष्य जाति के शत्रु को दंड न देना देश और मनुष्यता के प्रति विश्वास-घात है। फिर भी आपने जितना मुझे प्यार किया है उसके बदले में आप जो कहेंगे वही मैं करूँगा।

(हाथ से तलवार और सर से राज-चिह्न
उतार कर शाहजहाँ के पैरों
पर रख देता है।)

तो अब्बा यह तलवार और यह राज-चिह्न। यदि मुराद और औरंगजेब इन्हें पाकर संतुष्ट हो जावें तो हज़ारों आदमियों का खून कराने की आवश्यकता नहीं !

दरबारी:—युवराज दारा की अजय !

(सहसा जहानारा का प्रवेश)

जहा:—जय नहीं यह पराजय है। एक महान् सिद्धांत की क्षणिक मोह और भावुकता की बलिवेदी पर हत्या है। आप लोग नहीं जानते कि औरंगज़ेब की आँख दारा के युवराज-पद पर नहीं सम्राट के राजमुकुट पर है, क्या इसे हम बर्दास्त कर सकेंगे। हिंदुस्तान के हिंदुओं और मुसलमानों के सम्मिलित विश्वास ने शाहजहाँ को अपना सम्राट और दारा को युवराज माना है, किसी की शक्ति नहीं जो सम्राट के सर से राजमुकुट छीने—किसी को यह अधिकार नहीं। दारा, तुम भी बह गए अब्बा के कमज़ोर दिल के आवेश में। सम्राट अकबर का वह स्वप्न कि हिंदुस्तान की शक्ति संसार में अप्रतिम हो क्या कभी सच्चा न होगा। वह होगा तभी जब कि हिंदू और मुसलमान मिलकर एक जान होंगे। यह काम दारा ही कर सकेगा। औरंगज़ेब तो राष्ट्र के टुकड़े कर देगा ! बोलो, दरबारियों क्या इसे आप पसंद करेंगे ?

कई आवाजें:—नहीं, कभी नहीं ?

जहा:—तो अब्बा, पहना दो दारा के सर पर यह राजचिह्न, दे दो उसे उसकी तलवार। आज्ञा दो कि जो व्यक्ति हिंदुस्तान के टुकड़े करना चाहता है, उसको यह ढंड दे सके !

यह भाई-भाई की लड़ाई नहीं है; यह है राष्ट्रीयता और साम्प्रदायिकता का संघर्ष है ।

शाहः—तेरी इच्छा पूरी हो, बेटी जहानारा । (दारा के सर पर राज-चिह्न पहनाता है और हाथ में तलवार देता है ।)

पटाक्षेप

दूसरा अंक

पहला दृश्य

समय--रात्रि का प्रथम प्रहर । स्थान--उज्जैन के निकट
क्षिप्रा के तट पर औरंगजेब का डेरा । औरंगजेब
अकेला विचार-मग्न घूम रहा है ।]

(नेपथ्य में गान)

साकी भर भर कर दे प्याला !

कल तो कल आने वाला है ।

वह सित है अथवा काला है ।

उसमें ज्योत्स्ना या ज्वाला है !

आने दे जो आने वाला ।

साकी भर भर कर दे प्याला ।

फूल हँस रहा है डाली पर,

नज़र वहीं उसकी माली पर,

आने वाली पामाली पर ।

वह तो हँसता है मतवाला ।

साकी भर भर कर दे प्याला ।

दुख आवें दुखको भेलेंगे,

सुख आवें, सुख में खेलेंगे,

फल शूल दोनों ले लेंगे,

अमृत भरा हो या विष ढाला !

साकी भर भर कर दे प्याला ।

(सहसा गान बन्द हो जाता है ।)

औरंग:—मुराद के डेरे में नृत्य, गान और शराब का दौर चल रहा है। जीवन को उसने कितना सरल बना लिया है। रणभूमि में भी नृत्य और गान ! जिस हाथ से एक क्षण पहले शराब का प्याला उठाया है उसीसे दूसरे क्षण तलवार भी पकड़ेगा। तोपें आग उगलती हैं, गोलियों और तीरों की वर्षा होती है, तब मुराद शत्रु-सेना पर बाज की तरह टूट पड़ता है। लोग आश्चर्य करते हैं कि कुरान शरीफ के विरुद्ध आचरण करने वाले व्यक्ति को मैं हिन्दुस्तान का बादशाह क्यों बनाना चाहता हूँ। मुराद बादशाह बनेगा ! कितना सुन्दर स्वप्न है ? मैं ने भी पी है महत्वाकांक्षा की जहरीली शराब !

(एक मुगल सैनिक का प्रवेश)

सैनिकः— (कोर्निश करके) एक राजपूत सैनिक आपसे मिलना चाहता है ।

औरंगः— उसे भेज दो ।

(सैनिक का कोर्निश करके प्रस्थान)

शायद जसवन्तसिंह ने कोई सन्देश भेजा है । यह राजपूत जाति कितनी बहादुर है, लेकिन यदि इसमें बुद्धि होती तो संसार पर राज्य करती । ये लोग दूसरों के लिए जान दे सकते हैं—अपनों के लिए नहीं । दूसरों की अधीनता स्वीकार कर सकते हैं अपनों की नहीं । इनका आत्माभिमान ही इनके गले की फाँसी है । महाराज जयसिंह शुजा से युद्ध करने बंगाल की तरफ गए हैं, महाराज जसवंतसिंह मुक्त से लोहा लेने आए हैं । छत्रसाल हाड़ा जसवंतसिंह के साथ इसलिए नहीं आए कि दोनों में से कोई भी किसी एक के अधीन नहीं रह सकता था । इनकी इस शानदार कमजोरी का लाभ विदेशी पूरा पूरा उठाते हैं । इन राजपूतों की सम्मिलित शक्ति से मुझे कभी सामना न करना पड़ेगा । मुझे विश्वास है कि इनके प्रथक-प्रथक द्योगों को मैं विफल कर दूंगा ।

(राजपूत सैनिक का प्रवेश तथा अभिवादन करना)

औरंगः--तुम शाही सेना से आए हो !

सैनिकः--जी हाँ, शाहज़ादा साहब ! महाराज जसवन्त ने कहा-
लाया है कि 'मैं आपसे युद्ध करने नहीं आया । सम्राट ने
आज्ञा दी है कि समझा-बुझाकर दोनों शाहज़ादों को वापस
दक्षिण भेज दिया जावे ।'

औरंगः--तो मैं यह मान लूँ कि महाराजा जसवंत सिंह तीस
हज़ार सेना, सैकड़ों तोपें और लड़ाई का इतना सामान
सिर्फ मुझे समझाने-बुझाने के लिए लाए हैं ।

सैनिकः--इस विषय में वही स्पष्ट रूप से बता सकते हैं ।
महाराज आपसे भेंट करना चाहते हैं । वे आपको
सब बातें समझा कर कह सकेंगे ! उनका कहना है कि
उनके लिए तो दारा, औरंगज़ेब, मुराद और शुजा चारों
ही समान हैं, वे मुगल राज्यवंश का सम्मान रखना चाहते हैं ।
शाहज़ादों के खिलाफ़ तलवार पकड़ना उनके धर्म नहीं,
इसलिए यह खून-खराबी न हो वह यही चाहते हैं ।
एक बार उन्हें मिलने का अवसर दीजिए ।

औरंगः--सुनो सैनिक ! महाराज जसवंत सिंह का मैं आदर
करता हूँ, वे बुर्ज़ग भी हैं और वीर भी । लेकिन इस वक्त
उन्होंने मेरा रास्ता रोक कर मेरा अपमान किया है । आगरा

वह लड़ना नहीं चाहते तो सारी सेना छोड़कर सेनापति नजावत खाँ के पास आवे, वह उन्हें मेरे लड़के मोहम्मद सुलतान के पास लावेंगे, मोहम्मद उन्हें लेकर मेरे पास आवेगा ।

(सैनिक की मुद्रा कठोर होती है ।)

आँखें फाड़कर क्या देखते हो ? मेरी आज्ञा उनसे जाकर कह दो ।

(एक ओर राजपूत सैनिक का प्रस्थान,
दूसरी ओर से मुगल सिपाही
का प्रवेश)

सैनिक:—(कोर्निश करके) एक मौलवी साहब आपसे मिलना चाहते हैं ।

औरंग:—उन्हें यहाँ भेज दो !

(सैनिक का प्रस्थान)

औरंग:—जसवन्त सिंह ने अपनी सेना के लिए जो स्थान चुना है वह उनके लिए बहुत असुविधाजनक है । वहाँ सेना के विस्तार के लिए कोई गुंजाइश नहीं । चारों ओर गड्ढे हैं, दल-दल है, तिसपर मोर्चे बनाकर, खाइयाँ खोदकर अपना

ही मार्ग रोक लिया है। सैनिक दृष्टि से इससे बड़ी भूल भी हो सकती है ? मैं आधी लड़ाई तो ऐसे ही जीत चुका हूँ । जब हमारी तोपें आग उगलेंगी तो सारी राजपूत सेना को भून डालेंगी और वह भागकर प्राण-रक्षा भी न कर पावेंगे ।

(मौलवी का प्रवेश)

औरंगः—आइए, मौलवी साहब ! आपका काम हुआ !

मौलवीः—न क्यों होता ? मैं ने, यह कह कर कि दारा तो हिंदु-स्तान से इस्लाम का नाम मिटाना चाहता है, शाही फ़ौज के सभी मुसलमान सैनिकों को बागी बना दिया है।

औरंगः—मैं आपको इसका क्या बदला दूँ ?

मौलवीः—बदला ! नहीं शाहज़ादा, इस्लाम के बन्दे ने अपना फ़र्ज अदा किया है ।

औरंगः—आप भी इस्लाम के सेवक हैं और मैं भी सेवक बनकर ही रहना चाहता हूँ । मुझे बादशाह बनने की लालसा नहीं है लेकिन काफ़िर दारा को भी मैं बादशाह नहीं बनने दूंगा । आज हमारे मज़हब पर विपत्ति के बादल मँडरा रहे हैं, प्रत्येक मुसलमान का कर्तव्य है कि वह मुझे इस विपत्ति

का मुकाबिला करने में सहायता दे। इतनी बड़ी सल्तनत निर्माण करने से लाभ क्या, यदि हम अपने धर्म का विस्तार न कर सकें।

(शाहनवाज़ खाँ का प्रवेश)

मौलवी:—खुदा आपको सफल करे। दुनिया भर के मुसलमान आपका अहसान मानेंगे।

शाहनवाज़:—माफ़ करें, मौलवी साहब, आप जैसे लोगों ने ही औरङ्गज़ेब को पथ-भ्रष्ट किया है। नहीं तो क्या उदारमना शाहजहाँ के पुत्र में उनके गुण न होते। देखो, औरङ्गज़ेब तुम मेरे दामाद हो, तुमको मैंने अपने प्राणों की ज्योति अर्पण की है—मैं आज तुम से एक भीख माँगने आया हूँ।

औरंग:—क्या ?

शाहनवाज़:—यही कि तुम वापस दक्षिण लौट जाओ ! तुम सबे मुसलमान हो, धर्म के नाम पर तुम स्वार्थ और ईर्ष्या की लोलुप जीभ को तृप्त करने का यत्न न करो। तुम यह कह कर कि तुम इस्लाम की सेवा करना चाहते हो, दारा का—अपने सगे भाई का—सर उतारना चाहते हो, अपने बुजुर्ग बाप को—अबोध बहन जहाँनारा को रास्ते पर भीख माँगने बैठाना चाहते हो। तुम दुनिया को धोखा दे

सकते हो लेकिन खुदा की आँखों में धूल नहीं भोंक सकते, वह तुम्हारे दिल में बसने वाले स्वार्थ के साँप की फुफकार को हर घड़ी सुनता रहता है। औरङ्गजेब अब भी वक्त है, तुम वापस दक्षिण चलो !

औरंगः—मैं मजबूर हूँ ! औरङ्गजेब का कदम पीछे नहीं हटता ।

शाहनवाजः—तो आज से शाहनवाज अपने दामाद का दुश्मन है। तुम मुझे सगे बेटे से बढ़ कर हो। तुम मेरे दिल का दर्द नहीं समझते ! आह ! आज मनुष्यता श्वसुर को दामाद का वैरी बनने को बाध्य कर रही ।

(शाहनवाज खाँ का प्रस्थान)

मौलवीः—हाँ, एक काम तो मैं भूल ही गया था। महाराज जसवन्तसिंह के साथ जो सेना आई है उसके दो भाग हैं, एक राजपूत सेना और एक मुसलमानों की सेना। मुस्लिम सेना के सेनापति कासिम खाँ ने यह पत्र आपको दिया है।

औरंगः—(पत्र लेकर पढ़ता है। उसका चेहरा प्रसन्न हो जाता है।) इसे कहते हैं खुदाईमदद ! वस अब मेरे पौ बारह हैं। तीन चौथाई जीत तो हो गई। अब जसवन्तसिंह जी से सन्धि-चर्चा करना व्यर्थ है। मौलवी साहब, अब आप आराम कीजिए।

(मौलवी सादब का प्रस्थान)

औरङ्गः--(पत्र को आँखों से लगाता है) बहन रोशनआरा का पत्र है । मेरे सूने आकाश की एक मात्र तारिका, मेरे बादलों से घिरे हुए जीवन-नभ की विद्युत-रेखा, मेरी तूफ़ानों में बहने वाली नौका की पतवार, रोशनआरा ! तुमने आगरा में रह कर मेरे लिए विजय-मार्ग साफ़ कर दिया है । कासिम खाँ को तुमने खूब पट्टी पढ़ाई है । ठीक युद्ध के समय वह अपनी सारी सेना लेकर युद्ध-भूमि से हट जावेगा । इस तरह आधी शाही सेना तो मुकाबले में ही नहीं आवेगी । रह जावेंगे थोड़े से राजपूत उन्हें हम तोपों से भून डालेंगे ! औरङ्गजेब तुम्हारी किस्मत का सितारा बहुत तेज़ है ।

(नेपथ्य में फिर गाने की आवाज़ आती है ।)

साकी भर-भर कर दे प्याला !

कल तो कल आने वाला है,

वह सित है अथवा काला है,

उसमें ज्योत्स्ना या ज्वाला है,

आने दे जो आने वाला !

साकी भर-भर कर दे प्याला !

औरंगः—मुराद के डेरे में अब भी नृत्य और गान की लहरें उठ रही हैं। कल भयंकर युद्ध होने वाला है। रात में जागरण और दिन में युद्ध, ये दोनों काम एक साथ कैसे निभेंगे ? जाऊँ मुराद को सोने के लिए कहूँ। कल उसे बहुत श्रम करना है।

(प्रस्थान)

पट-परिवर्तन

दृश्य दूसरा

[स्थान—उज्जैन में शाही छावनी।

समयः—रात्रि का दूसरा प्रहर मुगल सेनापति अपने डेरे के आगे घूम रहा है।

कासिम खांः—चाहा था थोड़ी नींद ले लूँ, लेकिन उसे तो, मानों, कोई चुरा ले गया है। दारा और औरङ्गजेब ! मनुष्यता और धार्मिक कट्टरता ! जहाँनारा और रोशनआरा मोहब्बत और जालसाज़ी ! आज धर्म और अधर्म का द्वंद्व है। मेरा दिल पूछता है, 'कासिम खाँ तुम किसका साथ दोगे ?' दारा जैसे भले आदमी को धोखा देना अच्छा नहीं, लेकिन

रोशनआरा । उसकी शराब से भी ज्यादा मादक आँखें हर घड़ी कुछ संकेत करती जान पड़ती हैं । उसके हाथ का दिया हुआ मदिरा का प्याला आज भी मेरे दिमाग को मदहोश कर रहा है । अब पाप और पुण्य सोचने का अवकाश कहाँ है ?

(एक राजपूत सेनाध्यक्ष का प्रवेश)

कासिम:—तुम कहाँ से आ रहे हो !

सेनाध्यक्ष:—ओहो आप हैं, सेनापति, कासिम खाँ ! आप आधी-रात के समय यहाँ क्या कर रहे हैं ?

कासिम:—पहले मेरी बात का उत्तर दो ! इतनी रात गए कहाँ से आ रहे हो ?

सेनाध्यक्ष:—आपको नहीं मालूम ! आप सेनापति हैं ? फिर भी आपको नहीं मालूम ! आश्चर्य की बात है ।

कासिम:—क्या सेनापति को सेना के प्रत्येक आदमी के प्रत्येक पल का इतिहास मालूम रहता है ! मैं पूछता हूँ, तुम कहाँ से आ रहे हो, क्या करने गए थे ।

सेनाध्यक्ष:—जहाँ आपको जाना चाहिए था, जो आपको करना चाहिए था ।

कासिम:—अर्थात्

सेनाध्यक्ष:—अर्थात् महाराजा जसवन्तसिंह के शिविर से । कल के युद्ध के विषय में परामर्श करने के लिए सभी प्रमुख सेनाध्यक्ष जमा हुये थे ।

कासिम:—तो वहाँ क्या निश्चय हुआ ?

सेनाध्यक्ष:—यही कि पहले ब्राह्म-मुहूर्त में—सुबह चार बजे क्षिप्रा में स्नान किया जाय और फिर रक्त-नाङ्गा । में इस कुम्भ-क्षेत्र को कुरुक्षेत्र बनाया जाय ।

कासिम:—जो दूत औरंगजेब के पास संधि-चर्चा करने गया था उसे क्या उत्तर मिला ।

सेनाध्यक्ष:—वही जो कृष्ण को कौरवों से मिला था । संधि नहीं होगी । कल रण-चण्डी चेतगी ! हम तो चाहते थे ।

कासिम:—क्या चाहते थे ?

सेनाध्यक्ष:—यही कि आज रात को ही औरंगजेब की सेना को आगरा के पेठे और दिल्ली के लड्डू खिलाए जाते ।

कासिम:—तुम हँसी करते हो । मुझे जानते हो !

सेनाध्यक्ष:—जानता हूँ सेनापति कल आपकी अधीनता में हमें

युद्ध करना है। बात यह थी कि मैं और कीर्तिवन्त जी यह चाहते थे कि मुराद और औरङ्गजेब ने हम पर अग्नि-वर्षा करने के लिए जो तोपें सजाई हैं, उन्हें अभी रात को आक्रमण करके छीन लिया जाय। ताकि सुबह हमारे लिए मैदान साफ़ हो जावे।

कासिम — महाराज ने क्या कहा ?

सेनाध्यक्ष: — वही जो एक राजपूत कह सकता है। रात को आक्रमण करना मर्दानगी के विरुद्ध है। राजपूत शत्रु को सावधान करके आमने-सामने धर्म-युद्ध करता है—धोखे से विजय प्राप्त नहीं करता। प्रभात होने दो, रण का शंख बजने दो, राजपूतों की तलवारें, युरोपियनों द्वारा सञ्चालित तोपों का मुँह बन्द कर देंगी।

कासिम:—कैसे ?

सेनाध्यक्ष—यह भी पूछने की बात है। आप राजपूतों को नहीं जानते ! अजी एक-एक राजपूत एक-एक तोप के मुँह में डाट बन कर बैठ जावेगा। उन गोरों की क्या मजाल कि वे तोपें चला सकें।

कासिम:—मालूम होता है आज अफ़्रीम ज्यादा खा गये हो !

दारा के स्थान पर तुम्हीं तो सम्राट नहीं बनना चाहते ?

सेवाध्यक्ष—मैं सम्राट बनूंगा । अजी सम्राट तो वही बनेगा जिसे रोशनआरा बनाना चाहेगी । हम राजपूत तो लड़कर मरने के लिए पैदा हुये हैं, सो लड़ेंगे और मरेंगे । अच्छा आदाब !

(प्रस्थान)

कासिमः---यह क्या कह गया ? जैसे इसने मेरे छिपे हुए पाप का घूँघट खोल दिया । सम्राट वही बनेगा जिसे रोशनआरा बनाना चाहेगी । तो क्या दारा, शुजा, औरंगजेब और मुराद सभी चित्र-पट से हट सकते हैं । मनुष्य क्या नहीं कर सकता ! रोशनआरा क्या नहीं करा सकती ! दुनिया में क्या संभव नहीं है । किस अदृश्य की ओर आज मेरे कदम उठ रहे हैं । ये राजपूत भी औंधी खोपड़ी के आदमी हैं । कार्तिवन्त की सलाह मान कर शाही सेना यदि रात को ही आक्रमण कर देती तो लंबी यात्रा से थकी हुई मुराद और औरंगजेब की सेनाएँ कुछ न कर सकती । उधर औरंगजेब की छावनी में कैसा सम्राटा है । सब सुख की नींद सो रहे हैं । उन्हें राजपूतों का विश्वास है कि ये रात को आक्रमण नहीं

करेंगे। नींद नहीं आती, फिर भी बिस्तर पर करबट तो बदलनी ही चाहिए ।

(प्रस्थान)

पट-परिवर्तन

तीसरा दृश्य

[स्थान:—आगरा के राजमहल में नादिरा का कमरा । समय-रात का प्रथम प्रहर । नादिरा खिड़की के पास चिता-ग्रस्त खड़ी है ।]

नादिरा:---कैसी सुन्दर चाँदनी रात है । लेकिन उधर एक कोने से भेघों की एक टुकड़ी तीव्र गति से बढ़ी चली आ रही है । थोड़ी देर बाद चाँद छिप जावेगा । यह चाँदनी में चमकने वाला हमारा बाग़ अन्धकार में छिप कर नदारद हो जावेगा । इसी तरह तो हमारे जीवन का चक्र घूम रहा है ।
(जहानारा का 'आखें भर भर आती हैं,' गुनगुनाते हुए प्रवेश ।)

नादिरा:---कौन जहानारा !

जहानारा—हाँ, भाभी ! इस खिड़की के पास खड़ी किसे देख रही हो ?

नादिरा:—उस मेघ की टुकड़ी को जो चाँद को छिपाने के लिए बड़ी चली आ रही है। जहानारा, तुम मुझे एक गीत सुनाओ। तुम्हें खुदा ने कवि बनाया है, तुम गीत लिख-लिख कर अपने दिल का दर्द हलका कर लेनी हो, लेकिन मैं.....

जहानारा:—तुम्हें किस बात का दर्द ? क्या आज भैया से लड़ाई हुई है।

नादिरा:—अब हमारे लड़ाई-भिड़ाई के दिन समाप्त हो गए, जहानारा। अब तो तुम्हारे भैया बड़ी लड़ाइयाँ लड़ते हैं, जिनमें हज़ारों सर कटते हैं, खून की नदियाँ बहती हैं।

जहानारा:—जो बादशाह बनता है, या बनना चाहता है, उसे ये खेल खेलने ही पड़ते हैं, भाभी ! हिन्दुओं के होली के त्योहार को तुम कितना पसंद करती हो, जिन्हें प्यार करते हैं उन पर रंग डालते हुए फूले नहीं समाते, लेकिन बादशाहों की होली खेली जाती है खून से ! हाँ, यह बताओ आज तुम इतनी उदास क्यों हो ?

नादिरा:—न जाने क्यों मेरे प्राणों में चिन्ता ने अपना नीड़ बना लिया है। सुलतान शुजा से युद्ध करने गया है। वह अभी तक नहीं लौटा। माँ की ममता बेचैन है। बहुत सम-

ज्ञाने पर भी मन उदास हो ही जाता है । दूसरी बात यह है कि औरङ्गजेब और मुराद के विरुद्ध जो हमारी सेना गई है, उसका कुछ हाल नहीं मालूम हुआ !

जहानाराः--भाभी जो होना होगा, होता रहेगा । मर्द इन बातों पर विचार करें । हम अपनी ग्रहस्थी [को लेकर घर में निश्चित रहें । दिन भर कर्म कर के आने वाले पुरुष की थकावट मधुर मुस्कान और सेवा से दूर करें । स्त्रियों का तो यही काम है जो स्थान प्रकृति में निर्मल भरने का है, जो महत्व चाँदनी रात का है, वही मनुष्य के जीवन में स्त्री का है ।

बादिराः--किंतु, जब मर्द का कर्म-क्षेत्र नारी की ग्रहस्थी उजाड़ने लगे तब भी क्या हमें उन बातों पर न सोचना चाहिए और तुम भी तो रात दिन राजनीति की बातों में भाग लेती हो, सो किस लिये ?

जहानाराः--इसीलिये कि मेरी कोई ग्रहस्थी नहीं है । मेरे प्राण साधारण नारी के प्राणों की भाँति किसी एक सीमा में बँधे हुए नहीं हैं, इसी लिये तो मुझे आकाश में उड़ना पड़ता है । मानव-हृदय आधार चाहता है, कम से कम स्त्री के प्राण तो बिना बलशाली सहारे के निर्जीव से जान पड़ते हैं । जैसे लताएँ तरु का सहारा पाकर बढ़ती हैं, उसी

भाँति नारी भी । मुझे ऐसा कोई सहारा नहीं, इसीलिये मैं नीरस और निर्मम राजनीति में पड़ी हुई हूँ । किन्तु, तुम पिंजरे की मैना हो । तुम अपने पिंजरे के बाहर, के बसंत-पतझड़ के विषय में क्यों सोचती हो ?

नादिरा:—इसीलिए कि इस मैना का कुछ ऐसे पक्षियों से संबंध है जो इस पिंजरे के सीखचों में बंद नहीं हैं । उनपर ग्रीष्म की दोपहरी, वर्षा की झड़ या आकाश के बल्ल के क्या प्रभाव पड़ रहा है, यह सोचना ही पड़ता है ।

जहानारा:—मालूम होता है दारा की संगति ने तुम्हें भी दार्शनिक बना दिया है ।

नादिरा:—दुख मनुष्य को दार्शनिक बना देता है । तुम बातों में उड़ाकर गीत सुनाने से छुटकारा पाना चाहती हो ! भाभी को आसानी से नहीं भुलाया जा सकता । सुनाओ न ! संसार में संगीत, काव्य, चित्र और नृत्य आदि की कलाएँ न होती तो मनुष्य अपनी वेदना को कैसे सहता । जीवन रेगिस्तान-सा सूना और नीरस हो जाता । दूर तक कहीं हरयाली नज़र न आती । दुखी और तृप्ति प्राणों को स्नेह और सहानुभूति का एक कण भी न मिलता । सुनाओ न !

बहानाराः—सुनो, मैंने आज ही लिखा है (गान)

आंखें भर भर आती हैं ?

बादल की टुकड़ी घिर आती,
मेरे नभ का चाँद छिपाती,
सहसा अंधियारी है छाती,
उस तम में मन व्याकुल होता बूंदें भर भर आती हैं ।
आंखें भर भर आती हैं ।

मैं सुख के उपवन में फूली
मैं सुख के झूलने में झूली,
मैंने वैभव-सीमा छूली,
किंतु, बालुका की कनिकाएँ मुझ को पास बुलाती हैं ।
आंखें भर भर आती हैं ।

मैं वसंत का यौवन लाई ।
मेरी छविसे ज्योत्स्ना छाई ।
शांति शर्माया जब मुसकाई ।
किंतु, जगत की मुझे तुच्छतम चिनगारियां जलाती हैं ।
आंखें भर भर आती हैं ।

[दारा का अत्यन्त अन्यमनस्क भाव से प्रवेश और एक लम्बी साँस लेकर पलंग पर लेट जाना । नादिरा हाथ में पंखा ले कर झूलती है ।]

जहाः—क्यों भैया, इतने परेशान क्यों हो ! जसवंतसिंह का कोई समाचार मिला !

दाराः—हाँ !

जहाः—औरंगजेब वापस दक्षिण लौट गया !

दाराः—नहीं । महाराज जसवंतसिंह पाराजित हो कर सीधे जोधपुर चले गए ।

नादिराः—राजपूतों ने दशा किया!

दाराः—नहीं, राजपूतों ने नहीं मुसलमानों ने ! कासिम खाँ ने धोखा दिया । और राजपूतों को उनकी अकाल ने दया दिया ।

जहाः—यानी ।

दाराः—जो सैनिक युद्ध से लौटे हैं उन्होंने बताया है कि महाराजा जसवंतसिंह ने अपनी सेना को जिस स्थान पर खड़ा किया वह अत्यन्त तंग था, तिस पर महाराज जसवंत-

सिंह ने फौज के आगे २०० गज तक पानी डाल कर उसे कुचलवा कर कीचड़ करा ली थी !

जहाः—शत्रु के आक्रमण से बचने के लिये ऐसा किया होगा ।

दाराः—यह तो आत्म-हत्या करना हुआ उस भूमि में चारों ओर गड्ढे, खाई और दलदल थे । सेना को फैलने को कोई स्थान न था । जैसे एक द्वीप में सारी सेना कैंद कर दी गई हो । जब औरंगज़ेब के यूरोपियन तोपखाने ने अग्नि-वर्षा की, तब हमारी सेना को न फैलने को जगह मिली, न आक्रमण करने को सुविधा !

नादिराः—फिर तो हमारी सेना भुनगों की तरह भुन गई होगी ।

दाराः—फिर भी राजपूत राजपूत ही हैं । वीरता में उनका मुकाबला कौन कर सकता है ! राजपूत मरना जानते हैं लेकिन गाजर-मूली की तरह नहीं । गोलों से भूने जाकर उनका मन अपमानित होने लगा । मुकुंदसिंह हाड़ा के नेतृत्व में वे सेना के नियम और सेनापति की आज्ञा की प्रतीक्षा किए बिना शत्रु पर दूट पड़े । उनके भैरव-रव से आकाश गूँज उठा । शत्रु के तोपखाने की एक न चली । गोले बरसाती हुई तोपों के सामने ही ये छाती खोले, तलवार

घुमाते आगे बढ़ चले । तोपखाने के सेनापति और दूसरे सेनपतियों को उन्होंने मार गिराया ।

जहा:—शाबाश राजपू ! जाति, फिर अपनी हार कैसे हुई ?

दारा:—उन कालदूत राजपूतों की सहायता को हमारी शेष सेना न बढ़ी । कासिम खाँ ने धोखा दिया । वे राजपूत बिना यह देखे कि कोई हमारी सहायता को आता है या नहीं, बढ़ते ही गये । वे छुरी की तरह शत्रु-सेना के पेट में घुस गये । सैकड़ों को मारते हुये खप गये । मुकुंदसिंह हाड़ा, रत्नसिंह राठौर, दयालसिंह भाला, अर्जुनसिंह गौड़, सुजानसिंह सीसोदिया आदि सभी राजपूत सरदार इस युद्ध में मारे गये ।

बादिरा:—हमारे लिये इतने प्राणों की बलि चढ़ाने की क्या आवश्यकता ? मेरी राय में यह हत्याकाण्ड अब बन्द होना चाहिये ।

दारा:—अब तो यह और भी असंभव हो गया । अब यह कैसे हो सकता है, नादिरा ! जिन राजपूतों ने हमारे लिए प्राण दिये हैं, उनके प्रति हमारा कुछ कर्तव्य है । कोटा और बूंदी के हाड़ाओं के आत्म-त्याग की बात सोचो । कोटा का तो सारा राज-परिवार — ज्यों के ज्यों

भाई इस अभागे के लिए इसे युद्ध में बलि हो गये । अकेले हाड़ा ही नहीं गहलोत, गौड़, राठौर और सीसौदिया सभी ने अपना अपना भाग इस बलि-यज्ञ में दिया है । यह आग अब बुझाए नहीं बुझ सकती । मेरे मित्र छात्रसाल हाड़ा के दिल पर क्या बीत रही होगी । नादिरा, अब हमें प्रत्येक विपत्ति के लिए तैयार हो जाना चाहिए । ये राजमहल, ये सोने-चाँदी के बर्तन, ये जवाहरातों के आभूषण, ये फूलों की सेजें, यह अंगूरी शराब सब छूट जावेंगे । हमारी प्रतीक्षा में विपत्ति की नरक-ज्वाला मुँह खोले हुए हैं । पहले मैं भी सोचता था कि किसी तरह इस ग्रह-युद्ध की लपटों को रोका जा सकेगा, किंतु, अब तो यह नितांत असम्भव है । इतने बहु-मूल्य प्राणों की बलि लेकर दारा किस मुँह से अपने सुख की रक्षा करे । ये राजभवन मानों हमें अभिशाप दे रहे हैं । जितना सुख आज तक हमने भोगा है, प्रकृति अब उसका बदला चुका लेगी । (उठ कर खड़ा हो जाता है ।) अब आराम करने को अवकाश नहीं है ।

(प्रस्थान)

जहानारा:—ठहरो, भैया । पुरुष को संयम और धैर्य से काम लेना चाहिए ।

(पीछे—पीछे प्रस्थान)

नादिरा:—रात के समय कहाँ जाते हो ? मेरा जीवन न जाने किस अँधेरे लोक में प्रवेश कर रहा है ?

(पीछे-पीछे प्रस्थान)

पट—परिवर्तन

चौथा दृश्य

[स्थान:—आगरा के राज-महल का उद्यान । रोशनधारा और उसकी विश्वास-पात्र दासी घूम रही है]

दासी:—सुनते हैं राजपूत कभी पीठ नहीं दिखाता, लेकिन इस बार महाराजा जसवन्त सिंह को भागना ही पड़ा न ? आपकी बुद्धि के आगे राजपूतों का शौर्य बेकार सिद्ध हुआ ।

रोशन:—मेरे गुप्तचर ने उज्जैन के युद्ध का सभी समाचार सुनाया है । जसवन्तसिंह जी की वीरता के विषय में कोई सन्देह नहीं किया जा सकता । उसने मुझे बताया कि महाराजा जसवन्तसिंह ने जब देखा कि उनके साथी असाधारण वीरता और अपूर्व निर्भयता का चमत्कार दिखाकर बिजली की तरह कौंध कर समाप्त होगये हैं, और शाही

सेना के सहस्रों सिपाही औरङ्गजेब के दल में मिल गए हैं, तब उन्होंने भी मुकुन्दसिंह हाड़ा की तरह शत्रु-दल में घुस कर प्राण समर्पण करने की इच्छा की ।

दासी:—लेकिन ऐसा किया नहीं !

रोशन:—ऐसा हो जाता तो एक काँटा साफ़ हो जाता । लेकिन ऐसा नहीं हुआ । भूचाल-सी गति वाले इस राजपूत से छुटकारा नहीं मिला । महेशदास, आसकरण तथा अन्य राठौर प्रधानों ने उनके घोड़े की लगाम पकड़ ली । उन्होंने कहा, “महाराज, आप राजस्थान के आशा-सूर्य हैं । मुग़ल शाह-जादों के ग्रह-युद्ध में चढ़ा दिए जायँ इतने सस्ते आपके प्राण नहीं हैं । घावों से आपका शरीर शर्जर हो गया है, निरंतर चार घण्टे से आप अनथक युद्ध करते रहे हैं, आपके अचल माहस और पराक्रम ने ही राजपूतों को अभी तक युद्ध-भूमि में स्थिर रखा है, हम अब भी प्राण चढ़ाने को प्रस्तुत हैं ? लेकिन इनसे कौनसा महान् उद्देश्य सिद्ध होगा । उपयुक्त समय तो आने दीजिए, हम लोग अपने जीवन की बलि चढ़ाने से कभी पीछे नहीं हटेंगे । मुग़ल राजकुमार परस्पर एक-दूसरे का गला काटें तो काटें, राठौरों के सर यहाँ क्यों बर्बाद हों ? यह कह

कर वे लोग महाराज को बल-पूर्वक बाहर खींच ले गए ।

दासी:—और सुना है कि जोधपुर में महारानी महामाया ने उन्हें किले में नहीं घुसने दिया । क्या यह सच है ?

रोशन:—बिलकुल सच है । मेरी भी इच्छा होती है कि मैं भी राजपूतनी होती । तलवार लेकर युद्ध-क्षेत्र में युद्ध करती । पुरुषों से स्पर्धा करती । यहाँ राजमहलों में मेरा मन नहीं लगता । भीतर से एक आँधी उठती रहती है, जिसका दबाव मुझसे ही नहीं सहा जाता । प्राणों में एक ज्वाला-मुखी-सा जलता रहता है । छाती के भीतर इतनी बाष्प जमा हो गई है कि मानों वह हड्डी-माँस के टुकड़े करके बाहर निकल पड़ेगी । महारानी महामाया ! जसवन्तसिंह की पत्नी महामाया ! उसके मैंने केवल एक बार दर्शन किए हैं । मैं सच कहनी हूँ, महाराज जसवन्तसिंह के स्थान पर वह रण-क्षेत्र में होती तो औरङ्गजेब की क्या मजाल कि वह विजय पा सकता । उसको दृढ़ता राजपूतों को इतना बल देती है कि उसके नेतृत्व में वह दस गुनी शक्ति से भी लोहा ले सकते हैं ।

दासी:—लेकिन महारानी ने महाराज को नगर में आने से क्यों रोका !

रोशन:— क्यों रोका ? राजपूतानियों के दिलों को तू नहीं जानती । वे अपने पतियों की अपकीर्ति सुनना पसन्द नहीं करती । महामाया का हृदय महाराज की पराजय से तड़प उठा । चोट खाई हुई सर्पिणी की भाँति वह फुफकार उठी । उन्होंने कोट के सारे द्वार बन्द करा कर महाराज को कहला भेजा, 'संग्रामभूमि में हारे हुए पति को राजपूतनी के घर में स्थान नहीं है । राजपूत यदि विजयी नहीं हो सकता तो रण-क्षेत्र में प्राण तो दे सकता है ।'

दासी:— कैसी कठोर, किंतु कितनी तेजस्विता से भरी हुई बात है ? ऐसी तेजस्विनी वीर नारियों के उदाहरण हम सुसलमानों में नहीं मिलते !

रोशन:— मिलते क्यों नहीं । तुमने चाँदबीबी का नाम नहीं सुना ? उसने सम्राट अकबर के दाँत खट्टे किये थे । ऐसी अनेक चाँदबीबियाँ हमारे यहाँ पैदा हो सकती हैं । हमारे मर्दों ने स्त्रियों को पर्दे में बन्द कर उन्हें दुर्बल बना दिया है । स्त्रियों को सिर्फ मनोरञ्जन का सामान— एक खिलौना समझा जाता है । हमारा समाज अपने आधे अंग को बेकार कर बैठा है । सलमानों की यह दुर्बलता किसी दिन उन्हें पराजित, पतित और दास बनाकर छोड़ेगी ।

दासी:—आप यह क्या कहती हैं !

रोशन:—मैं ठीक कहती हूँ, जब मेरे प्राण बाहर के संसार से मिलने के लिए रात-दिन तड़पते हैं तो मैं अनुमान करती हूँ कि आठों पहर बुरके में बन्द रहने वाली मेरी दूसरी बहनों का क्या हाल होगा ? मुसलमान स्त्रियों की यह भीतर ही भीतर सुलगती रहने वाली आग हमारी जाति की जड़ों को राख कर रही है। न जाने किस दिन हमारे मदों की आँख खुलेगी। अच्छा अब तुम जाओ। वह देखो सरदार खलीलुल्लाह खाँ आ रहे हैं। उज्जैन के युद्ध में कासिम खाँ ने जो कुछ किया है, उसके कारण दारा अब उसे कोई काम न सौंपेगा। अब खलीलुल्लाह खाँ से काम निकालना पड़ेगा।

(एक ओर से दासी का प्रस्थान दूसरी ओर से
खलीलुल्लाह खाँ का प्रवेश)

रोशन:—आइए खाँ साहब !

खलीलु:—आदाब शाहजादी साहिबा ! इस दास को किस लिए याद किया है।

रोशन:—क्या आप सिर्फ दास बनना चाहते हैं !

ख़्वाबीबः—अगर आप बनने का अवसर दें !

रोशनः—इस वक्त तो रोशनआरा भी दासी है, ख़ाँ साहब !

ख़्वाबीबः—किसकी ।

रोशनः - जिनके आप, जिनके सब मुसलमान !

ख़्वाबीबः—यानी ।

रोशनः—यानी दारा की, जहानारा की, छत्रसाल हाड़ा की, राजपूतों की ।

(मुसकराती है ।)

ख़्वाबीबः—आप ठीक कहती हैं शाहज़ादी ! दारा का रंग-ढंग देखकर मेरा जी जल उठता है । वह रात-दिन हिन्दुओं की तारीफ़ के पुल बाँधता है और मुसलमानों का अपमान करता है । मैंने तो उस दिन भरे दरबार में सम्राट से कह दिया था कि औरंगज़ेब के विरुद्ध हम दारा का साथ न देंगे ।

रोशनः—सम्राट ने क्या कहा ?

ख़्वाबीबः—सम्राट क्या कहते ? दारा ने तमक कर कहा, “भाई मुसलमान मेरा साथ नहीं देंगे तो न सही, मैं छत्रसाल हाड़ा

को साथ लेकर औरंगज़ेब की सेना को इस तरह भगा दूंगा, जिस तरह शेर गीदड़ों को भगा देता है ।”

रोशनः—अब आपने क्या निश्चय किया है । आपको पता है उज्जैन की विजय से उत्साहित हो कर औरंगज़ेब बढ़ा चला आ रहा है । आप किस का साथ देंगे !

खलीफ़ाः—मुझे तो सम्राट का खयाल आता है, नहीं तो मैं तो औरंगज़ेब का साथ देकर मुगल-साम्राज्य को हिन्दुओं की गुलामी से बचाना चाहता हूँ ।

रोशनः—सम्राट तो बूढ़े हो गये हैं । उन्हें अच्छे-बुरे का कुछ खयाल नहीं । जिस मुगल-साम्राज्य की स्थापना में आपके बुजुर्गों ने अपना रक्त सीचा है, उसे मिटने से बचाना आपका कर्तव्य है ।

खलीफ़ाः—मैं इतना ही कर सकता हूँ कि किसी ओर से न लड़ूँ ।

रोशनः—इस से काम न चलेगा । आप युद्ध-क्षेत्र में जाइये । दारा की ओर से लड़िये । फिर वही कीजिये जो कासिम खाँ ने किया था ।

खलीफ़ाः—यह तो धोखा है ।

रोशनः—हहहा ! धोखा ! आप जन्म से राज-दरबार में रहे हैं, फिर भी आप इतना न सीख सके कि धोखे का दूसरा नाम राजनीति है। एक ज़माना था जब वीरता से राज्य स्थापित किये जाते थे, अब तो राजनीति या धोखा-धड़ी से ही सारे काम साधे जाते हैं। बोलिये, इस रोशनआरा की बात आप मानेंगे !

खलीलः—आप की बात न मानूं ऐसा कभी हो सकता है !

रोशनः—(मुसकराती है) ऐसी बात है। अच्छा अब हम विदा हों। जहानारा के गुप्तचर मेरी टोह में होंगे।

(खलीलुल्लाह खॉं का प्रस्थान)

रोशनः—संसार देखे कि एक स्त्री क्या कर सकती है ? आगरा के राज-महल में बैठी हुई ही रोशन आरा लड़ाई के मैदानों का नक्शा खींचती रहती है। माँ मुमताज तुम भी इस दुनिया को अपनी संतानों के रूप में एक अजायबघर दे गई हो। यह जो कुछ हो रहा है, वह भला है या बुरा, यह मैं नहीं जानती, लेकिन जो कुछ हो रहा है उसमें मुझे बड़ा आनन्द आता है। यह भीषण खेल खेलते हुए मेरे मन को तृप्ति मिलती है। अभी मुझे बहुत काम करना है।

(प्रस्थान)

पाँचवाँ दृश्य

[स्थान - आगरा का राज-महल। सादे किं। कलापूर्ण ढंग
से सजे हुये कमरे की खिड़की के पास जहानारा
खड़ी हुई आकाश की ओर देख रही है।]

जहानारा:—(गाना)

अरे चाँद तू क्यों मुसकाता ?

पहने नक्षत्रों की माला,

आता करता हुआ उजाला ।

मधुर सुधा बरसाने वाला;

नहीं जानता जग की ज्वाला !

इसीलिये तू हँसता आता ।

अरे चाँद तू क्यों मुसकाता ?

घाव हो रहे हैं मन-मन में ,

दुनिया रत आकुल क्रंदन में ,

जीवन नहीं आज जीवन में ,

त तो रहता नील गगन में ।

जगके दुख न देखन जाता ।

अरे चाँद तू क्यों मुसकाता !

तुझे देख सागर फूँटता ,

तुझे घूमने को लहराता ,

कितने दुखियाओं के दिल की ,

नौकाएँ अनजान डुबाता ,

तूफानी सागर मदमाता ,

अरे चाँद तू क्यों मुसकाता ?

जितने तारे हैं अंबर में ,

जितने हम आँसू बोते हैं ,

महासिंधु भर देते जग में ,

जब दुखियों के दिल रोते हैं ,

तू तब भी मुसकाता आता ।

अरे चाँद तू क्यों मुसकाता ?

तुम अंधे हो चाँद. तभी तो इतने निर्लज्ज होकर
मुसकरा रहे हो। अंधे हो उसी तरह जिस तरह आजकल

के संपत्तिवान और शक्तिशाली मनुष्य है । बाहर पास की मौपड़ी में चार चार बच्चों की माँ अपने भूखे-नंगे बच्चों को ककरीली भूमि पर निद्रालीन पड़े देख कर रो रही है और श्रीमानों की कोठियों में वेश्या की स्वर-लहरी गूँज रही है । लोग आज मनुष्य-धर्म को भूल गए हैं । मैं कैसी अभागिन हूँ जो शाहजादी हूँ । सम्राट की पुत्री हूँ । सम्राट ! कैसा निष्ठुर नाम है यह । इस शब्द के साथ कितने कटे हुए मस्तक, रक्त की सरिताएँ, विधवाओं का कषण-क्रंदन, और गरीबों का चीत्कार याद आ जाता है । मेरे हृदय में रात-दिन एक विद्रोह प्रज्ज्वलित रहता है, किन्तु मैं दुर्बल नारी कुछ नहीं कर पाती ।

(लाठी टेकते हुए शाहजहाँ का प्रवेश)

शाह:—बेटी, जहानारा

जहा:—आओ अम्मा (आगे बढ़ कर सहारा देती है और अपने ही पास खड़ा कर लेती है ।)

शाह:—यहाँ अकेली क्या कर रही हो ?

जहा:—मैं आपसे कहती हूँ उदास न होना चाहिये, लेकिन कभी कभी मेरा भी बाँध टूट जाता है । मैं देख रही थी आसमान में चाँद हँस रहा है, नीचे चाँदनी में स्नान करके ताज-

महल और भी उदास हो गया है। उसमें मेरी माँ सो रही है। अनन्त निद्रा में सो रही है। मैं उन दिनों की याद कर रही थी, अब्बा ! जब मैं माँ की गोद में खेलती थी। अब्बा वह दिन न जाने कब आवेगा जब मैं अम्मीजान के पास जाकर सो सकूँगी !

शाहः—ऐसी बात मुँह पर न लाओ, बेटी ! मेरे दुखी दिल को निराशाभरी बातों से व्यथित मत करो। मेरे लिए मृत्यु-रथ चल पड़ा है। मैं भी उस पर सवार होकर जाने के लिए तैयार हो गया हूँ। मेरे आगे जो दुख का समुद्र भरा पड़ा है, मुझे उसमें केवल तुम्हारा सहारा है, जहानारा। तुम मुमताज की प्रतिच्छाया हो, मेरे प्राणों का प्रकाश हो ! तुम अपने जी को मलिन न करो, बेटी !

जहानाराः—अब्बा, यदि मेरे आँसुओं से आपका हृदय व्यथित होता है तो मैं प्रज्ज्वलित ज्वाला-मुखी के मुँह पर बैठकर भी मुसकराऊँगी। तूफानी समुद्र की छाती पर बैठकर भी गाऊँगी। प्राणों में महाप्रलय को छिपाए रख कर भी आह न भरूँगी। अब्बा ! (आँखों में आँसू आ जाते हैं ।)

शाहः—लो, तुम तो रोने लगी, बेटी ! (आँसू पोंछता है ।)
ओ आना है कह जाता है। तुम्हारी माँ चली गई। तुम्हारा

बाप भी चला जायगा । मेरी माँ चली गई थी, मेरे बाप भी चले गए थे ! फिर भी बेटी, मुझे जीना पड़ा । मनुष्य का संसार केवल उसका घर ही नहीं होता । उसे अपने सुख-दुख संसार के सुख-दुख में डुबा देने होते हैं ।

जहाः--अम्मा !

(दारा का प्रवेश)

दाराः--अम्मा !

जहाः--आओ, दारा !

(दारा पास जाकर खड़ा होता है ।)

दारा--औरंगज़ेब बढ़कर ग्वालियर तक आ पहुँचा है । चंपतराय बुंदेला भी औरंगज़ेब से जा मिला है ।

जहाः--चंपतराय ! वह हिंदुत्व पर जान देने वाला साठसी ठाकुर !

दाराः--उसे मुझ से व्यक्तिगत द्वेष जो है । मैंने उसकी जागीर छीन कर औरछा वालों को दे दी थी ।

जहाः--हिंदुओं में यही दुर्गुण है । वे व्यक्तिगत मान को समाज और जाति के मान से बढ़कर मानते हैं । चंपतराय जैसे कट्टर हिंदू का औरंगज़ेब का साथ देना अजीब सी बात है ।

दादाः—अब इन समस्याओं पर विचार करने को समय नहीं है, वहन ! मुझे आगे क्या करना चाहिए, यही पूछने आया हूँ ।

जहाः—युद्ध और क्या ?

शाहः—युद्ध ! किस लिए, बेटी ! औरंगज़ेब और मुराद भी तो तुम्हारे भाई हैं । उन्हें आने दो । मैं उनके पैरों पर पड़कर अनुरोध करूँगा, स्वर्ग में बैठी मुमताज की कसम देकर कहूँगा, कि बेटा दिल से ईर्ष्या की आग निकाल दो ।

जहाः—अबबा, आप किस मरीचिका के पीछे दौड़ रहे हैं ! औरंगज़ेब ! क्या वह मनुष्य है ? जो अपने पिता के जीवित रहते ही सिंहासन पर बैठना चाहता है, जो अपने बड़े भाई को कुत्तों की मौत मारना चाहता है, जो आज यूरोपियनों की सहायता से राजपूतों का सर कुचलना चाहता है, जो मुसलमानों में साम्प्रदायिक संकीर्णता के बीज बो कर उन्हें अन्धा बनाना चाहता है, उससे आप क्या आशा करते हैं ? वह अभिशाप है मुगल-साम्राज्य के लिए, मुसलमानों के लिए और राष्ट्र के लिए ।

शाहः—बेटा, हम आपसी युद्ध में दुर्बल हो जावेंगे और ये ही यूरोपियन जो औरंगज़ेब के मददगार बन कर आए हैं, औरंगज़ेब को या उसकी सन्तान को नष्ट करने का

पड़यंत्र करेंगे। मैं चाहता हूँ कोई ऐसा मार्ग निकले जो इनका पड़यंत्र सफल न हो।

जहा:—आपकी आशंका यथार्थ है। लेकिन औरङ्गजेब कब मानने वाला है। अब तो औरङ्गजेब के साथ इन यूरोपियनों का भी मस्तक चूर्ण करना आवश्यक है।

दारा:—इसके सिवा कोई और चारा नहीं। मैं जाकर चम्बल-तट के सारे रास्ते रोक लेता हूँ, ताकि औरङ्गजेब इस पार न आ सके। जहाँ तक सम्भव होगा रक्त-पात रोकूँगा। यदि औरङ्गजेब से यह आशा हो कि वह सारी प्रजा को एक समान समझेगा तो मैं आज भी इस ग्रह-युद्ध से विरत होकर एक साहित्यिक का जीवन बिताने को तैयार हूँ।

शाह:—अच्छा, बेटा ! कल सुबह मैं रथ पर बैठा कर रण-यात्रा के लिए तुम्हें विदा कहूँगा !

जहा:—कल का कल देखा जावेगा, अब चल कर आराम कीजिए।

(हाथ पकड़ कर ले जाती है)

(सब का प्रस्थान)

(पट-परिवर्तन ।)

— — —

छठा दृश्य

[स्थानः—आगरा के पास शम्भूगढ़ का
मैदान ! समय—प्रभात ! वीणा और
बूढ़े प्रकाश का प्रवेश ।]

वीणाः—(गाना)

अंबर में छाई है लाली,

जागो-जागो सोने वाले,

बुला रही है तुमको काली ।

भर दो, भर दो, पड़ा हुआ है

युग-युग से जो खप्पर खाली ।

अंबर में छाई है लाली ।

प्राणों में जो जलती ज्वाला,

क्या है वह बुझ जाने वाली ।

उमड़ी कंगालों की आँह

जग का दिल दहलाने वाली ।

अंबर में छाई है लाली ।

बिहगों के स्वर में भी गूंजी,
 सर्व-नाश की तान निराली,
 लोहू से भरती आती है,
 ऊषा भी अंबर की प्याली ।
 अंबर में छाई है लाली ।

बाबा, देखो, कैसी आँधी-सी उठ रही है। धूल से सारा आकाश भर गया है। देखो न सारे आसमान में धूल की घटा सी छा गई है। कुछ दिखाई ही नहीं देता। यह क्या है ?

प्रकाश:—यह वही है, बेटी, जिसका आह्वान तुम अपने गीतों में करती रहती हो। यह काली का खप्पर भरने वाली टोली है। दारा की सेना युवराज से युद्ध करने जा रही है।

बीया:—औरङ्गजेब और दारा भाई-भाई है न !

प्रकाश:—हाँ, बेटी !

बीया:—फिर ये क्यों लड़ते हैं ?

प्रकाश:—राज्य-सिंहासन के लिए, शक्ति और सम्मान प्राप्त करने के लिए !

बीणा:—सिंहासन पाने से मनुष्य में क्या विशेषता आ जाती है, बाबा ! एक मजदूर भी संसार में खाता-पीता, हँसता-गाता है और राजा भी । फिर बाबा राजा होने से ही क्या लाभ ?

प्रकाश:—बेटी, मनुष्य में सन्तोष नहीं है । वह अपनी स्थिति से सन्तुष्ट नहीं है । हमारा काम दो मुट्ठी अन्न, दो लोटे पानी और दो-एक कपड़ों से चल जाता है । अनेक मनुष्य ऐसे हैं जिनका हाथी-घोड़े, महल-बाग, नौकर-चाकर और मद-मदिरा से भी मन नहीं भरता । बेटी, यह अतृप्ति 'प्रेतिनी' संसार को नरक बनाए हुए है । औरङ्गजेब के हृदय में भी आज वही अट्टहास कर रही है । ये सब उसी के खेल हैं ।

बीणा:—वही दारा न जो उस दिन ताजमहल में मिले थे ।

प्रकाश:—हाँ, वही ।

बीणा:—वह आदमी नहीं देवता है ।

प्रकाश:—देवताओं को लोग दुनिया में नहीं रहने देना चाहते । देखो न दारा पर बङ्गाल से शुजा और दक्षिण से औरङ्गजेब और मुराद चढ़ आए हैं । पता नहीं मुगल-राज्य और भोली प्रजा का क्या भविष्य है ? अब हम चलें । यहाँ सेना आने वाली है । तुम अपना गीत गाओ ।

वीणा:—(गान)

अंबर में छाई है लाली ।

(एक ओर से गाते हुए वीणा और प्रकार का प्रस्थान

दूसरी ओर से खलीलुल्लाह खाँ और कासिम खाँ

का प्रवेश ।)

खलीलुल्लाह:—देखो कासिम खाँ, यह सब राजपूतों का षड़यंत्र है । उन्हींने सम्राट और दारा का मन मुसलमानों के विपरीत कर दिया है । इस गृह-युद्ध से मुगल-बल क्षीण हो जावेगा और मुसलमानों का मूर्य डूब जावेगा ।

कासिम:—आप ठीक कहते हैं सरदार खलीलुल्लाह खाँ साहब । इन राजपूतों को नीचा दिखाना हमारा धर्म है ।

खलीलु:—सम्राट भी मानों बिलकुल हिंदू हो गए हैं । दारा को बिलकुल हिंदुओं की रीति से रथ पर बैठा कर रण-यात्रा के लिए रवाना किया गया । जहानारा ने राजपूती ढंग पर उसका तिलक किया । हमारी मुस्लिम संस्कृति का नाश करने की मानों इन्होंने कसम खाली है ।

कासिम:—दारा को अपने राजपूत मित्रों का कितना विश्वास है ? उनके कारण उन्होंने कितनी बार हमारा अपमान किया है ! दरबार में जब आपने औरंगजेब के बिरुद्ध सेना भेजने

की सलाह का विरोध किया तो दारा ने किस तरह आँखों में अंगारे भर कर कहा था “न दे कोई मुसलमान मेरा साथ । मैं केवल छत्रसाल हाड़ा को लेकर औरंगज़ेब से युद्ध करूंगा । रण-केशरी छत्र-साल हाड़ा औरंगज़ेब को और उसके साथियों को इस तरह मार भगावेंगे जैसे शेर गीदड़ों को ।”

खलीलुः—यह बात मुसलमान सरदारों के दिल में चुभ गई है । दारा का और छत्रसाल हाड़ा का अभिमान चूर्ण होगा । शाही सेना में जितने मुसलमान सेनापति हैं उनके हृदय में दारा के प्रति ज़रा भी सहानुभूति नहीं । नसीरीखान पहले ही औरंगज़ेब से जा मिले हैं ।

कासिमः—मुझे तो न बुलाया गया है न मैं युद्ध-भूमि में आऊँगा ही ।

खलीलुः—मैं वही करूंगा जो आपने उज्जैन में किया था ! अब दारा का सर्वनाश निकट है । अब हम चलें ।

(एक ओर से दोनों का प्रस्थान । दूसरी ओर से छत्रसाल हाड़ा और रामसिंह राठौर का प्रवेश ।)

छत्रसालः—आज तलवार की प्यास बुझाने का अवसर आ पहुँचा है, भाई रामसिंह !

रामसिंह—हाँ छत्रसाल जी !

छत्रसालः—हम राजपूतों पर आज बहुत बड़ा उत्तरदायित्व आ पड़ा है। मैं जानता हूँ कि दारा का भविष्य हमीं लोगों पर निर्भर है। रुस्तम खाँ को छोड़कर कोई और मुसलमान सेनापति सच्चे दिल से दारा का साथ नहीं देगा। जसवंतसिंह जोधपुर में हैं। जयसिंह शुजा से युद्ध करने गए हैं। दारा की आशा हमीं पर है।

रामसिंह—सम्राट ने सदा ही हमें अपना मित्र कहा है लेकिन हम तो उन्हें अपने पिता के तुल्य मानते हैं। राजपूत जिससे स्नेह पाता है उसके लिए प्राणों की बलि देता है। उज्जैन के युद्ध में भी मुसलमान तो जान बचाकर भाग गए, लेकिन राजपूतों ने जीवन की बलि देकर अपना कर्तव्य पूरा किया।

छत्रसालः—मुझे दुख तो इस बात का है कि कुछ राजपूत भी औरंगजेब के साथ जा मिले हैं। इन्द्रद्युम्न धँधेरा, चम्पतराय बुन्देला और भगवंतसिंह आज औरंगजेब के साथ हैं। हमने तो औरंगजेब के चम्बल के तट पर ही सारे अरमान ठंडे कर दिए थे। चम्बल के सारे घाट रोककर उसका इस पार आना असंभव कर दिया था, किंतु चम्पतराय ने दूसरा ही मार्ग बता दिया। दारा से बैर निकालने का कैसा बुरा

समय उसने चुना है। एक राजपूत की इस करतूत से हमारा भी सर नीचा हो रहा है। चम्पतराय की वीरता से कौन इनकार कर सकता है ! किन्तु इसी वीरता का उचित मार्ग में उपयोग उसने नहीं किया। वह यह नहीं अनुभव कर पाया कि हमारा देश व्यक्तिगत मानापमान से ऊपर है।

रामसिंह—उसे इसके लिए पछताना पड़ेगा। लोग कहते हैं कि यह राजपूतों और मुसलमानों का युद्ध है, पर वास्तव में तो यह स्वार्थों का युद्ध है ! व्यक्ति-गत राग-द्वेषों पर धर्म का आवरण डाला जाता है। चम्पतराय का उदाहरण भी यही सिद्ध करता है। जिस व्यक्ति ने बुन्देलखण्ड के मंदिरों को नष्ट किया, उसी का साथ बुन्देलखण्ड का वीर-केशरी चम्पतराय दे रहा है।

जुन्नसाबः—आप ठीक समझे हैं, भाई। मनुष्य न हिन्दू है, न मुसलमान। युवराज दारा और मैं साथ उठते-बैठते, हँसते-गाते और एक-दूसरे का सुख-दुख कहते हैं सुनते हैं, मानो हम एक ही बाप के बेटे हैं। हमारे सामने जाति और धर्म का प्रश्न ही नहीं उठता। आज दारा के स्नेह का बदला चुकाने का अवसर आया है। हम राजपूतों पर भारत का सम्पूर्ण भविष्य निर्भर है। सदियों से विदेशी मुसलमान भारत पर प्रभुत्व स्थापित करने का प्रयत्न करते रहे, पर

उनकी क्षणिक सफलता राजपूतों के आत्म-त्याग और वीरता के कारण विफल होती रही है। मुग़ल बादशाहों ने देश के सामने नया ही दृष्टि-कोण रखा है। वे भूल गये हैं कि वे विदेशी हैं। वे भारत का साम्राज्य अफ़ग़ानिस्तान और ईरान में भी स्थापित करना चाहते हैं, ऐसा है उनका इस देश के प्रति प्रेम। शासन-प्रबंध में उन्होंने हम राजपूतों का सहयोग लिया है। औरंगज़ेब इस सुंदर योजना को नष्ट कर देना चाहता है। हमें उसका यह प्रयत्न विफल करना अनिवार्य है।

रामसिंह:—हमारे जो बस में हैं वह हम करेंगे। राजपूत यम से भी युद्ध करने में नहीं घबराता। जिस तरह पतंग दीप की ज्योति-शिखा पर प्राणोत्सर्ग कर देता है उसी तरह हम भी रण-धंडी की छवि-ज्वाला में जल मरने को प्रस्तुत हैं।

छत्रसाल:—मुझे राजपूतों से यही आशा है। तुम जानते हो रामसिंह, मेरा तो घर ही उजड़ गया। उज्जैन की युद्ध-भूमि में हाड़ावंश के राजपूतों ने अपने जीवन चढ़ा दिए। मुझे संसार में कोई आकर्षण नहीं रहा। मेरा जी चाहता है, मैं अकेला ही औरंगज़ेब की ६० हजार सेना में घुस पड़ूँ, तीर की तरह सेना को चीरता हुआ औरंगज़ेब के पास

जा पहुँचूं । बिजली की तरह उस पर दूट पड़ूं ।

(दारा का प्रवेश)

दारा:—आप यहाँ हैं । चलिसे अभी कुछ सलाह करनी है ।

कुबलाज:—चलिए ।

(सब का प्रस्थान)

घट-परिवर्तन

सातवाँ दृश्य

[स्थान:—नादिरा का कमरा । समय:—संध्या । नादिरा

खिड़की के पास खड़ी हुई डूबते हुए सूर्य को

देख रही है ।]

नादिरा:—सूर्य डूब रहा है । न वे आए न उनका समाचार । आज शम्भूगढ़ की भूमि ऐसी लाल होगी जैसा पश्चिम का आकाश हो रहा है । कैसा भयङ्कर काम है यह युद्ध । मनुष्यों के प्राणों के साथ यह भीषण खिलवाड़ क्यों किया जाता है ! हज़ारों बीर जिनके शरीर फौलाद से सुहृद् हैं, आज सदा के लिए सो गए होंगे । हज़ारों माताएँ अपने गोदी के लाल गँवा चुकीं । हज़ारों युवतियों की माँग का सिन्दूर

आज पुछ गया । कैसा भयङ्कर खेल है यह । दो-तीन प्राणियों की लोलुप जीभ आज इतना खून पीकर भी तृप्त न होगी । मैंने उन्हें कितनी बार समझाया कि छोड़ दो इस राज-सिंहासन को, जिसके कारण भाई भाई पर तलवार उठाता है, जो बैठकर सुख से प्रेम की दो बातें करने को अवकाश नहीं देता । कहीं दूर बन में किसी कल-कल, छल-छल कर बहने वाली नदी के किनारे एक कुटी बना कर हम जा बसें । जिस तरह बन में हरिण कूदते-फिरते हैं, जिस तरह आकाश में पक्षी उड़ते हैं, उसी तरह हम भी, चिन्ताओं के भार से मुक्त, जगत् के आँगन में चले-फिरे । लेकिन वे नहीं मानते । उनकी दुनिया बहुत बड़ी है, उसमें नादिरा का अस्तित्व ही क्या ? उन्हें सारे संसार के सुख-दुख की चिन्ता है ।

(दारा को पकड़े हुए एक सैनिक का प्रवेश ।)

दारा:—(सैनिक के हाथों से छूटने का यत्न करता है ।) छोड़ दो मुझे । तुम मुझे रण-भूमि से क्यों पकड़ लाए, मजीद । मुझे वहीं प्राण क्यों नहीं देने दिये जहाँ मेरे मित्र छत्रसाल हाड़ा ने अपूर्व वीरता दिखाकर वीर-गति पाई । छोड़ दो मजीद । मैं युद्ध करूंगा । उस शैतान औरङ्गजेब का सर.....

(लड़खड़ा कर गिर पड़ता है ।)

नादिरा:—(आगे बढ़कर दारा का सर अपनी गोद में रखकर)
धीरज रखो, मेरे मालिक । तुम पुरुष हो । पुरुष का हृदय
पत्थर से अधिक सहनशील होता चाहिए । जीवन में ऐसे
उतार-चढ़ाव, आते ही रहते हैं ।

दारा:—तुम मुझे धैर्य्य देती हो, नादिरा । फूल से भी अधिक
कोमल नारी पुरुष को सहनशील बनने का आदेश देती है ।
नदी पहाड़ से कहती है कि तुम कठोर बनो । नादिरा मुझे
अपनी पराजय का ज़रा भी खेद नहीं, लेकिन छत्रसाल हाड़ा
का बिछोह असह्य है ।

(जहानारा का प्रवेश)

जहानारा:—भैय्या !

दारा:—आओ बहन, अन्तिम समय अपने अभागे भाई को
आशीर्वाद दो । नादिरा, तुमने अपने प्यारे हाथों से कितनी
बार अंगूरी शराब पिलाई है, क्या आज ज़हर का प्याला
न भर दोगी । मैं अब जीना नहीं चाहता ।

जहानारा:—तो क्या हमारी हार हुई है !

दारा:—हाँ जहानारा ! हमारी हार हुई है ? और मेरी ही

मूर्खता से। हम जीती बाज़ी हार गए। मुझसे छत्रसाल हाड़ा ने कल ही कहा था, “आज ही औरङ्ग-जेब पर आक्रमण कीजिये। चम्बल की कगारों में चलते-चलते उसकी फ़ौज थक गई है। उसके ५००० सिपाही तो चम्बल के ऊबड़-खाबड़ कगारों में धूप और थकावट के शिकार हो इस दुनिया से कूच कर गए। अगर हम जीतना चाहते हैं तो इसी समय आक्रमण करें।” मैंने कहा नहीं प्रतीक्षा करो। शायद औरङ्गजेब बिना खून-खराबी किए ही मान जावे। पहले दिन लड़ाई नहीं हुई। आह, कैसी दुराशा प्राणों में चाले हुए था। साँप अपना ज़हर स्वयं ही विस्र्जित कर देगा ! औरङ्गजेब मनुष्य बनेगा ! एक दिन आराम करने से औरङ्गजेब की सेना में नया बल आगया।

अहमदारा:—भैया, इसमें तुम्हारा भी अपराध नहीं। तुमसे अब्बा ने कहा था, ‘पहले तुम शस्त्र न उठाना।’ पर अब्बा तो बूढ़े हो गये हैं ! वे अन्धे हो रहे हैं मोह में। वे तुम्हें प्यार करते हैं, लेकिन औरङ्गजेब की भी मौत नहीं चाहते। आधे दिल से युद्ध और प्रेम में सफलता नहीं मिलती।

बारा:—अब्बा, औरङ्गजेब की मृत्यु नहीं चाहते तो दारा उसके

रास्ते से हट जाता है। वह दुनिया से भी बिदा लिए लेता है। मजीद, जाओ मेरा घोड़ा तैयार करो।

(मजीद का प्रस्थान)

बहाः—पागल हुये हो, दारा ! इस समय तुम कहाँ जाना चाहते हो !

दाराः—औरंगजेब के पास ! उसके हाथ में अपनी तलवार दूंगा, उससे कहूँगा तुम्हें मेरा सर चाहिये तो लो। अपने हाथ से अपने बड़े भाई का खून करो। स्वार्थ के लिये हिन्दुओं और मुसलमानों के दिल में वह जहर न भरो जो फिर किसी के दूर किये भी दूर न हो सके। तुम्हें लखते-ताऊस चाहिये, उसे तुम खुशी से ले लो। लेकिन बूढ़े बाप को सताकर मनुष्यता को कलंकित न करो। हिंदुस्तान को हिंदुओं और मुसलमान दोनों की माँ रहने दो, इसे साम्प्रदायिकता की आग से न झुलसाओ।

बहाः—तुम हिम्मत हारते हो, दारा ! भूत गए कि तुम किसके वंशज हो। क्या तुम बाबरशाह के जीवन से परिचित नहीं। कितनी बार वह बादशाह बने और कितनी बार भिखारी। मध्य एशिया से आकर हिन्दुस्तान जैसे अपरिचित देश में मुट्ठी भर लोगों के बल पर राज्य स्थापित किया।

हुमायूँशाह का जीवन क्या तुम्हें साहस प्रदान नहीं करता ।
 भाइयों के विश्वासघात ने उन्हें राज्यच्युत होकर निर्वासित
 होने को बाध्य किया, लेकिन अपने बाहु-बल से बुढ़ापे में
 भी उन्होंने खोया हुआ राज्य वापिस पाया । पुरुष
 नियति का दास नहीं उस का निर्माता है । निरंतर साधना में
 लगे रहना ही मनुष्य की सच्ची सकलता है ।

(शाहजहाँ का प्रवेश)

शाहः—बेटा दारा !

(दारा उठ कर शाहजहाँ के पैरों पर गिर पड़ता है ।

शाहजहाँ की आँखों से आँसू बह पड़ते हैं । उठाकर

दारा को हृदय से लगाता है ! सब की आँखों

में आँसू छलछला आते हैं, सब स्तब्ध

रहते हैं । नेपथ्य में गान सुनाई

पड़ता है ।)

फिर घटाएँ घोर आई

स्वर्ण-शैया पर बिछाकर

फूल सोते थे अभी ।

आज काँदों ने हमारे

पैर में महदी रचाई ।

घिर घटाएँ घोर आई ।

चाँद हँसता था हमारे,

भाग्य के आकाश में,

आज तारा एक भी हम को

नहीं देता दिखाई ।

घिर घटाएँ घोर आई ।

फूल सा हमको खिलाया

था जगत की गोद में

आज हम ने तंग आकर

धूल में धूनी रमाई ।

घिर घटाएँ घोर आई ।

कौन कहता है हृदय में

ऐ मुसाफिर चल अभी ,

यह मुसीबत कर रही है

आज तेरी रहनुमाई ।

घिर घटाएँ घोर आई ।

शाहः—होश में आओ, बेटा । धीरज रखो !

दाराः—(आलिंगन से अलग होकर) अब्बा, मैंने आपके नाम को बट्टा लगाया है । अब मुझे जिंदा रहने का कोई अधिकार नहीं है ।

जहाः—तुम यह क्या कहते हो ? वीर पुरुष असफलताओं को सीढ़ी बना कर विजय-मंदिर में प्रवेश करते हैं । भैया, तुम्हें अभी बहुत कार्य करना है ।

शाहः—जहानारा ठीक कहती है । शाहजहाँ के हुक्म से दारा के लिये प्राण चढ़ाने को अब भी हजारों वीर तैयार हैं ।

दाराः—यह मैं जानता हूँ, अब्बा ! लेकिन मुझे उनके प्राण लेने की इच्छा नहीं है । वह दृश्य मुझे याद आता है जब यूरोपियन तोपखाने की अग्नि-वर्षा सहते, घोड़े बढ़ाते रामसिंह राठौर, छत्रसाल हाड़ा और भीमसिंह गौड़ औरंगजेब की सेना में घुस गये थे । वे मुट्ठी भर राजपूत सहस्त्रों शत्रुओं के बीच संहार करते हुये धूमे थे । वह आँधी की तरह बढ़े, बिजली की तरह उनकी तलवारें चमकीं, संसार की आँखों में चक्राचौंध करते हुये उनका अस्तित्व समाप्त हो गया । मैंने चाहा कि उनकी मदद को जाऊँ इस लिये हाथी से उतर कर मैं घोड़े पर सवार होकर बढ़ा

लेकिन शैतान खलीलुल्लाहखाँ ने खबर फैला दी, 'दारा मारा गया ! हाथी खाती है।' हमारी सेना भाग खड़ी हुई ।

शाहः—कोई चिन्ता नहीं, बेटा, जिस हृदय ने मुमताज की मृत्यु का घाव सह लिया, वह यह भी सह लेगा । साहस न छोड़ो, दारा । समय बहुमूल्य है । मैं अपने खास सिपाहियों में से ५००० तुम्हारे साथ जाने को तैयार कर आया हूँ । यह लो । (दुवम-नामा देता है) हुकम-नामा । दिल्ली का सूबेदार तुम्हारे लिये खजाने का मुँह खोल देगा । यहाँ भी हाथियों पर अशर्फियाँ लाद दी गई हैं । तुम अभी दिल्ली चले जाओ ।

दाराः—आप का हुकम सिर आँखों पर । एक बार फिर यत्न करूँगा । शायद छत्रसाल का ऋण चुका सकूँ । बिदा दो, अब्बा ।

(शाहजहाँ के चरण छूता है)

(नेपथ्य में गान गूँजता है ।)

कौन कहता है हृदय में,

ऐ मुताफिर चल अभी ।

षट्पक्षेप

—

तीसरा अंक

पहला दृश्य

[समय—प्रभात । बीणा अपनी झोंपड़ी के आगे बैठी
माला गुंथ रही है ।]

घिर घटाएँ घोर आईं

फूल-सा हमको खिलाया
था किसी ने गोद में,
आज हमने तंग आकर
धूल में धूनी रमाई ।

घिर घटाएँ घोर आईं ।

कौन कहता है हृदय में
ऐ मुसाफिर चल अभी ,
यह मुसीबत कर रही है
आज तेरी रहनुमाई ।

घिर घटाएँ घोर आईं ।

बीणा:—(माला गूंथती हुई गा रही है ।)

(कासिम खाँ का कुछ सैनिकों के साथ प्रवेश ।)

बीणा:—(डर कर) बाबा । बाबा ।

(कुटी में भाग जाती है । प्रकाश का प्रवेश)

कासिम:—(एक सैनिक से) यह स्थान हमारा महल बनाने के लिए उपयुक्त है । इस भौंपड़ी को आज ही खुदवा दो ।

प्रकाश:—सरदार साहब, आगरा में और भी बहुत भूमि है । मुझ गरीब की भौंपड़ी को मिट्टी में मिलाकर आपको क्या सुख मिलेगा ।

सिपाही:—चुप रहो बूढ़े । तुम नहीं जानते ये कौन है ?

प्रकाश:—सरदार कासिमखाँ के नाम को सब जानते हैं ! अपने मालिक को धोखा देनेवाले नमक हराम आदमी का नाम

कासिम—ज़वान सम्हालो बूढ़े नहीं, तो अभी तुम्हारा सर ज़मीन पर लुढ़कता नज़र आवेगा !

प्रकाश:—ज़रूर !

(कुटी में चला जाता है ।)

कासिम:—वह लड़की कहाँ गई। सुंदर भी है और गाने में भी कमाल करती है। गुदड़ियों में भी लाल छुपे होते हैं। यह रूप तो राजमहल को भी अपनी ज्योति से जगमगा सकता है।

(प्रकाश का तलवार लेकर प्रवेश)

प्रकाश:—हाँ, अब आओ ! मैंने नहीं सोचा था कि इस बुढ़ापे में मुझे तलवार पकड़नी पड़ेगी। सरदार साहब ये बूढ़ी हड्डियाँ अब भी नर-पिशाचों से लोहा ले सकती हैं। आवे, कौन दो सरवाला मेरी भोंपड़ी उखाड़ना चाहता है।

कासिम:—तुम्हारी मौत पास आ गई है। सिपाहियो !

प्रकाश:—यह मैं जानता हूँ, कासिमखाँ, कि मेरी मौत पास आ गई है। दुनिया में कौन अमर होकर रहने आया है। पेट के लिए जिंदगी बेचने वाले सिपाहियों को मेरे आगे न भेजिए। वे गरीब हैं। मेरे भाई हैं। मैं उन पर वार नहीं कर सकता। जो लोग इनके लोहू के समुद्र में ऐश्वर्य की नौका चलाते हैं, जो अपने राजमहलों की नींव में इन बेचारों की हड्डियाँ डालते हैं, मैं उनसे तलवार बजाना चाहता हूँ। हमारी अभिलाषाओं के खंडहरों पर जिन वैभवशालियों के वासना-भवन निर्मित होते हैं, मैं उनसे शक्ति आजमाना

चाहता हूँ, सरदार ! आओ कासिम खाँ, मैं आज तुम से
 द्वन्द्व-युद्ध करूँगा । यह दीपक बुझने के पहले अपने तेज से
 चका-चौंध करना चाहता है ।

कासिम:—(सिपाहियों से) तुम जाओ ! (प्रकाश से) तुम्हारा
 साहस सराहनीय है । तुम वास्तव में वीर हो ।

(सिपाहियों का प्रस्थान)

प्रकाश:—हूँ ! (दाँत पीसता है ।)

कासिम:—मैं तुम से बहुत खुश हूँ । तुम्हारा क्रोध भी शानदार
 है । मैं तुम्हें इस झोंपड़ी से अच्छा स्थान रहने को देने
 को तैयार हूँ । एक बात मानो ! वह लड़की जो सुंदर है
 और मधुर गीत से.....

प्रकाश:—चुप रहो । नहीं तो खून कर दूँगा ।

कासिम:—पूरी बान भी सुनोगे । वह कितना अच्छा गाती है ।
 मैं किसी पाप-भरी लालसा से कोई बात नहीं कह रहा ।
 खुदा ने उसे कैसा सुरीला गला दिया है । संगीत कला
 संसार की श्रेष्ठतम नियामतों में है । इस कला से धन पैदा
 किया जा सकता है, बूढ़े । इस कला को रख कर भी तुम
 गरीब हो । कैसे मूर्ख हो ? वह दूर बैठकर ही सुनो और

शाम एक गीत सुना दिया करे । दुनिया की भक्तों से थका हृदय इससे आराम पा जाया करेगा । इतनी सेवा के बदले में मैं उसे और तुम्हें ऐश्वर्य से लाद दूंगा । यहाँ महल बनवा दूंगा ।

प्रकाशः—(सर पकड़ कर बैठ जाता है ।) आह ! यह मैं क्या सुन रहा हूँ । आज पाप का पुण्य पर कैसा आतंक छाया हुआ है । युवराज दारा ! तुम्हें गए सिर्फ दो दिन हुए हैं । इन दो दिनों में इतना परिवर्तन ! दुनिया ही बदल गई है । गरीबों की जान, माल, और इज्जत कुछ भी सुरक्षित नहीं । जो वासना के विषधर बिलों में घुमे हुए थे वे बाहर निकल पड़े हैं । उनकी फुफ्फारों से कलेजा काँपता है ।

कासिमः—क्या पागलों की तरह चिल्लाते हो ! मेरी बात मानते हो या मुझे बल-प्रयोग करना पड़ेगा ! (आगे बढ़ता है ।)

(जहानारा का प्रवेश)

जहाः—सावधान कासिम खाँ । मैंने तुम्हारा तमाशा देखा है । इस बूढ़े मजदूर पर बल-प्रयोग करते हुए तुम्हें शर्म नहीं आती । मुगल-सेनापतियों का ऐसा पतन । एक गरीब और बूढ़े मजदूर पर जोर आजमा रहे हो ।

कासिमः—मैं यहाँ अपना महल बनवाना चाहता हूँ, लेकिन यह

तलवार लेकर बैठा है। मुगल-सेनापति का ऐसा अपमान...

जहा:—अपमान ! वेशर्म कासिम, क्या गरीबों का मानापमान नहीं होता। उसकी भूमि पर तुम महल बनवाने की जुर्रत करते हो, यह उसका अपमान नहीं है। दुनिया में ऐसा कौन निर्लज्ज मनुष्य है जिसे अपनी जन्मभूमि और अपनी भौंपड़ी से ममता न हो। पक्षियों को भी अपना घोंसला प्यारा होता है। वह क्यों अपने भौंपड़ी को मिटने दे !

प्रकाश:—और यह कहता है बीछा को इनकी सेविका बना दूँ।

जहा:—क्यों कासिम खाँ ?

कासिम:—वह अच्छा गाती है।

जहा:—अच्छा गाती है। मैं भी तो अच्छा गाती हूँ। कभी आपने मुझे अपनी चाकरी में लेने का हुक्म नहीं सुनाया। आज आपके हाथ में शक्ति आ गई है, इसीलिए सारे गरीबों की इज्जत-आबरू को अपने मनोरंजन का साधन बनाना चाहते हो।

प्रकाश:—गरीबों से कुछ भी कहा जा सकता है। गरीबों की इज्जत-आबरू अमीरों की बपौती है।

जहा:—तुम ठीक कहते हो, बाबा । आसमान के चाँद की ओर हाथ बढ़ाने से लाभ नहीं, बगीचे का फूल सभी तोड़ लेते हैं । यह न समझो कि दारा नहीं है, तो तुम्हें प्रजा पर मनमाने अत्याचार करने दिये जायेंगे । औरंगज़ेब चाहे कितना ही दुष्ट हो लेकिन वह इस प्रकार की नीचता को पनपने न देगा । वह चरित्र की उच्चता पर विश्वास करता है । वह नारी जाति के प्रति इस अवहेलना को नहीं सह सकता । उसकी आड़ में तुम स्वेच्छाचार करके उसे बदनाम नहीं कर पाओगे । मैं आज ही उससे कहकर तुम्हें दंड दिलाऊंगी ।

प्रकाश:—यह बदला लेना हुआ शाहजादी ! इसमें इस अभागो का क्या दोष ? यह तो समाजिक व्यवस्था का परिणाम है । जाओ कासिम खाँ, मैंने तुम्हें क्षमा किया । आगे से मनुष्य बनने का यत्न करो ।

जहा:—वादा करो कासिम खाँ कि तुम आदमी बनोगे !

कासिम:—आप मेरा विश्वास कर सकें तो मैं वचन देता हूँ कि अपना सुधार करने का यत्न करूँगा ।

जहा:—जाओ ।

(कासिम खाँ का प्रस्थान ।)

प्रकाश:—बीणा ! ओ बीणा !!

(वीणा का प्रवेश)

प्रकाशः—अब हम जा रहे हैं, शाहजादी !

जहाः—कहाँ ?

प्रकाशः—जहाँ किस्मत ले जाये । हमने तो पहले ही निश्चय कर लिया था कि अब हम आगरा छोड़ देंगे । सम्राट शाहजहाँ और युवराज दारा की स्नेह-छाया में हमने कभी यह अनुभव नहीं किया कि हम गरीब हैं । अब यह अनुभव होने लगा है कि गरीब होना पाप है और हिंदू होना उससे भी बड़ा । अब विदा दो जहानारा (वीणा से) पैर छुओ बेटी इनके !

वीणाः—(जहानारा के पैर छूती है ।) अब हम जा रहे हैं ।

जहाः—(आँखों में आँसू भर कर ।) खुश रहना बेटी ! काश मैं भी तुम्हारे साथ चल सकती । राजमहलों के विषभरे वायुमण्डल के बाहर साँस ले सकती ! कई बार सोचा है कि लाहौर में मियामीर के प्रसिद्ध मुरीद मौलाना शाह बदखशी के आश्रम में खुदा की इबादत में जीवन व्यतीत करती, लेकिन अब्बा को छोड़कर मैं कहाँ जाऊँ । मैं घायल पक्षी की भाँति तड़पती रहती हूँ ।

प्रकाशः—गाओ बेटी ! अपना वही गीत गाओ !

बीणाः-- (गाती है ।)

घिर घटाएँ घोर आईं

फूल-सा हमको खिलाया

था किसी ने गोद में,

आज हमने तंग आकर

धूल में धूनी रमाई ।

घिर घटाएँ घोर आईं ।

कौन कहता है हृदय में

ऐ मुसाफिर चल अभी ।

यह मुसीबत कर रही है

आज तेरी रहनुमाई ।

घिर घटाएँ घोर आईं ।

(सब का प्रस्थान)

पट-परिवर्तन

—

दूसरा दृश्य

[समय—संध्या । स्थान—शाहजहाँ का खास कमरा]

शाहजहाँ खिड़की के पास ताजमहल की

ओर मँह किए बैठा है ।]

शाहः—वह ताजमहल है । पाषाणी मुमताज ! तुम पाषाण के उस विशाल भवन में सो रही हो । नारी, तुम फूल से अधिक कोमल और पाषाण से अधिक कठोर हो । दारा और औरंगजेब तेरे दो रूप हैं । एक फ़रिश्ता और एक शैतान ! मैं औरंगजेब पर पूर्ण रूप से कठोर न हो सका, क्योंकि वह मुमताज का बेटा है । मैं निर्दय न हो सका । मैं ने शुरू से ही राजदण्ड का कठोरता से प्रयोग किया होता तो इन काले साँपों की थूथरियों को कभी का कुचल दिया जाता । अंतिम क्षण तक मैं दुविधा में पड़ा रहा । किसे पता था मुमताज कि तुम मेरे गले में फूलों की माला के बहाने साँप डाल जाओगी । फिर भी मुमताज तुम तुम हो, सौन्दर्य का सागर, पवित्रता की निर्मरिणी, प्रेम की ज्योत्स्ना और स्नेह की यमुना । सम्राट शाहजहाँ मर गया । जो साँस ले रहा है वह तुम्हारा प्रेमी है । मेरा सम्पूर्ण ऐश्वर्य झिन गया, जो बचा है वह तुम्हारी स्मृति का प्रकाश है । मेरे सर में

राजमुकट छिन चुका है, लेकिन उसमें एक प्रेम के दीवाने का दीवानापन अब भी शेष है ।

(जहानारा का प्रवेश)

जहा:—उधर क्या देख रहे हो ! अब वहाँ क्या है अब्बा !

शाह:—हमारा सूना भाग्य ! जिसे हम प्यार करते हैं, वह हमारे प्रति पत्थर हो जाता है, यही पत्थर का ताजमहल, कह रहा है हमारी कल्पना उसमें सौंदर्य देखती है, कोमलता देखती है, माधुर्य देखती है और देखती है प्रेम । किन्तु वास्तव में वह पत्थर का टुकड़ा है ।

जहा:—मैं भी पत्थर ही हूँ न, अब्बा !

शाह:—वह पत्थर जिससे प्रेम की गंगा बहती है । वह पत्थर जो हजारों आघात चुपचाप सहता है । वह पत्थर जिसपर भक्त फूल चढ़ाते हैं । मेरा मनुष्यता पर जो विश्वास थोड़ा-सा कायम है वह केवल तुम्हारे कारण । तुमने मेरे सुख पर अपना सुख न्यौछाबर कर दिया, जहानारा । क्या किसी यग में किसी बेटी ने अपने बाप के लिए इतना त्याग किया है ? ये जवानी के रङ्गीन दिन और सब तरह के राग-रङ्ग से बंचित तुम्हारा जीवन ! मैंने तुम्हें भी बन्दी कर दिया जहानारा ! थोड़ा पानी पिलाओ बेटी !

(जहानारा सोने के पात्र में सुराही से पानी देती है ।)

शाहः--(एक घूंट पीकर) आह ! (प्याला रख देता है ।) सोने के पात्र में खारा पानी ! कैसी विडम्बना ! भाग्य का कैसा उपहास । यह तो जहर है, बेटी ! वह पश्चिम क्षितिज पर डूबता हुआ सूर्य न जाने क्या कह रहा । बिना पानी के हम कैसे जिएंगे ।

जहाः-- क्या किया जाय, अब्बा ! औरङ्गजेब जब तोपों के जोर से किला न ले सका तो उसने यह रास्ता निकाला है । किले में पानी का प्रवेश रोक दिया है । किले में एक दो कुए हैं, सो भी खारे ।

शाहः--कोई बेटा इतना निष्ठुर हो सकता है । तूने अच्छा किया बेटी जो शादी नहीं की नहीं तो तेरी संतान तुझे ही खा जाती । हिन्दू कितने उदार हैं कि अपने पितरोंको पानी देते हैं और इसलाम का भंडा पहराने वाला औरंगजेब अपने जिन्दा बाप को पानी के लिए तरसा रहा है ।

जहाः--अब्बा, कुरान शरीफ में किस जगह लिखा है कि भाई का हक मारो, बाप को पानी के लिए तरसाओ और दूसरे धर्म पर विश्वास करने वालों को मौत के घाट उतार दो । औरंगजेब स्वार्थ को मजहब के रंग से ढकना चाहता

है । उसे कौन सच्चा मुसलमान कहेगा ।

शाहः—बिना पानी हम कैसे जिँएँगे । एक बार भी मैं किले के बाहर जाकर खड़ा हो जाता तो मुझे विश्वास है कि आज भी औरंगज़ेब के आतंक पर शाहजहाँ की ममता की विजय होती । आज भी लोग मेरे लिए प्राण देने को प्रस्तुत हो जाते । लोग एक बार देख पाते कि उनका बूढ़ा सम्राट उनकी सहायता पाने के लिए आया है तो वे हज़ारों लाखों की संख्या में मेरे भंडे के नीचे खड़े हो जाते । हिन्दू और मुसलमान दोनों ही औरंगज़ेब का साथ छोड़ देते ।

महाः—लेकिन बाहर जाने की कोई सम्भावना नहीं है । अब हम पिंजरे में बन्द हैं । और आपने सुना शुजा पराजित हो कर बंगाल को लौट गया । महाराज जयसिंह और जसवंत सिंह ने भी औरंगज़ेब की अधीनता स्वीकार कर ली ।

शाहः—सच अन्त में राजपूतों ने भी.....

महाः—यह तो प्रकृति का नियम है कि उदय होते हुए सूर्य को सभी नमस्कार करते हैं । धर्म, न्याय, सिद्धांत और आदर्शों की कौन परवा करता है । सब पहले अपना स्वार्थ देखते हैं । नहीं तो कहाँ हिन्दू-विरोधी औरंगज़ेब और कहाँ महाराजा जयसिंह और जसवंत सिंह !

शाहः--अब अकेला दारा क्या करेगा ?

जहाः--दारा को आपने जो पत्र लिखा था, वह भी औरङ्गजेब के हाथ पड़ गया है ।

शाहः--दुर्भाग्य ! अन्धकार ! जीवन में सब ओर अन्धकार । खुदा की मर्ज़ी के आगे अब हमें सर झुका देना चाहिए । बेटी, किले के फाटक खुलवा दो । मेरे विजयी बेटे औरङ्गजेब को आने दो । मैं बूढ़ा हो गया हूँ, उसके हाथ में राज्य-भार सौंप कर मैं लड़के पढ़ा कर और तुम्हारी कविनाएँ सुन कर जीवन के शेष दिन काट लूंगा ।

जहाः--मैं आज स्वयं औरङ्गजेब के पास गई थी । मैंने उसे विश्वास दिलाया, “अब तुम पर नाराज़ नहीं हैं । यह भाई-भाई की लड़ाई ख़तम करो । शुजा को बङ्गाल और दारा को पञ्जाब देकर शेष देश मुग़ल और तुम बाँट लो । मुग़ल-यश को बढ़ा न लगाओ, भैया । जो हो गया उसे भूल जाओ । समुद्री मार्ग से आने वाले लालची व्यापारियों की ओर देखो । वे बड़े चालाक और भयंकर हैं । वे हमारी आपसी लड़ाई का लाभ उठा कर अपने पैर यहाँ जमा लेंगे । तुम गृह-युद्ध बन्द करो ।” मैं उसके पैरों पड़ी । किसी तरह उसे आपसे भेंट करने को आने के लिए राज़ी किया है । वह आता ही होगा ।

शाहः—(खुश होकर) वह आवेगा । सचमुच आवेगा ! क्या मुगल-साम्राज्य नष्ट होने से बच जावेगा ? सच जहानारा मुझे अपने या दारा के हाथ से शक्ति छिनने का खेद नहीं है, मुझे साम्राज्य के भविष्य की चिंता है । राजपूतों ने इस विशाल भवन में चूने का काम किया है । औरङ्गजेब उसी चूने को निकाल कर केवल पत्थर पर पत्थर रख कर इस इमारत को खड़ी रखना चाहता है । वह अन्या है । आज वह आवे ॥ तो मैं उसे समझाऊँगा ।

(मोहम्मद का प्रवेश)

मोहः—दादा जान (शाहजहाँ के पैर छूता है ।)

शाहः—खुश रहो, बेटा !

जहाः—तुम हो, मोहम्मद ! औरङ्गजेब नहीं आया !

मोहः—उनका इरादा बदल गया ।

जहा—तुम क्या आदेश लेकर आए हो ?

मोह—मुझ से अब्बा ने कहा कि दादाजान से शाही मोहर और राजमुकुट ले आऊँ !

शाहः—तुम बिल्कुल फ़रिश्ते हो, मोहम्मद ! औरङ्गजेब कितना

.खुशकिस्मत है कि उसे ऐसा बहादुर, सरल-हृदय और भोला पुत्र प्राप्त हुआ है ।

जहाः—सच बताओ, मोहम्मद ! तुम्हारे अब्बा जो कर रहे हैं, क्या वह ठीक है ।

मोहः—फूफी ! अच्छा और बुरा मैं नहीं जानता । मैं तो आँखें बन्द किए अब्बा का हुक्म बजाता रहता हूँ ।

शाहः—फिर भी सोचो, बेटा !

मोहः—सोचने से बहुत सोचना पड़ता है और भँकटें बढ़ती हैं, दादाजान ! मैं तो इतना ही याद रखता हूँ कि अब्बा का हुक्म मानना मेरा कर्तव्य है ।

जहाः—और तुम्हारे अब्बा का अपने अब्बा के प्रति कोई कर्तव्य नहीं है । मोहम्मद तुम्हें भी खुदा ने दिल दिया है, दिमाग दिया है, आत्मा दी है और आँखें दी हैं । उनका उपयोग करो । अन्धे बन कर न चलो ।

मोहः—मेरे हृदय है, आत्मा है, आप यह क्या कहती हैं ! मैंने उनका अस्तित्व कभी अनुभव नहीं किया । अनुभव करके क्या सुख मिलेगा ? मैंने सिर्फ अपने अब्बा का हुक्म मानना सीखा है, मुझे इसी में सुख मिलता है ।

जहा:—संसार में आज्ञा-पालन से भी एक बड़ी वस्तु है--विवेक-पूर्वक कर्तव्य का निश्चय करना और उसका पालन करना, खुदा के हुक्म को मानना, जो सब का बाप है।

(मोहम्मद चुप रहता है ।)

शाह:—चुप क्यों हो, मोहम्मद ! तुम राज्य-मुकुट लेने आए हो, तो लो ! बेटा, तुम औरङ्गजेब से ज्यादा योग्य हो। तुम मुगल-साम्राज्य को विध्वंस से बचा सकोगे। मैं इसे तुम्हारे सर पर रखता हूँ। मुझे विश्वास है कि तुम्हारे हाथों में मुगलों की कीर्ति सुरक्षित रहेगी।

(राज-मुकुट उतार कर मोहम्मद के सर पर रखता है। मोहम्मद वापस शाह जहाँ को दे देता है।)

मोह:—नहीं दादा ! मैं दुर्बल प्राणी हूँ मुझे यह प्रलोभन न दीजिए। मैं यहाँ नहीं ठहरूँगा। इसी राज-मुकुट के लिए इतना हत्याकाण्ड हुआ है। यह बहुत भयंकर वस्तु है ! काम पूरा किए बिना ही लौट जाऊँगा। मैं इसे नहीं छूना चाहता।

(जाने लगता है ।)

जहाः--ठहरो, मोहम्मद ! यह बताओ कि औरङ्गजेब ने स्वयं आने का वचन दिया था, वह आया क्यों नहीं ?

मोहः--वह तो आ रहे थे लेकिन फूफी रोशनआरा ने कहा, "औरङ्गजेब, तुम मूर्ख हो। जहानारा ने तुम्हें गिरफ्तार करने का षड्यंत्र किया है।"

जहाः--रोशनआरा ! जहरीली नागिन ! तूने अपने ही वंश का सर्वनाश किया है। तू वह भयंकर आग है जिसने मनुष्यता, स्नेह, दया, ममता और विश्वास को भस्मसात कर दिया है। तूने मुगल-साम्राज्य को विध्वंस के गढ़े में डाल दिया है। तू न होती तो शायद औरङ्गजेब को मनुष्य बनाया जा सकता।

मोहः--यह सच है, फूफी ! अब्बा इतने बुरे नहीं हैं। मैं जाता हूँ !

(मोहम्मद का प्रस्थान ।)

जहाः--चलो अब्बा, ज़रा बगीचे में बैठेंगे !

(जहानारा सहारा देकर औरंगज़ेब को ले जाती है ।)

पट-परिवर्तन ।

तीसरा दृश्य

(स्थान:—जामनगर का राजमहल । समय-रात्रि का प्रथम प्रहर । दारा और शाहनवाज खौं बातें कर रहे हैं ।)

दारा:—शाहनवाज! साहब ! मैं आपका उपकार जीवन भर नहीं भूल सकता । भँवर में फँसे हुए निरीह प्राणी की सहायता को कोई बिरला साहसवाला पुरुष ही दौड़ता है । व्यर्थ ही कोई अपना जीवन खतरे में क्यों डाले ? आपने अपने दामाद के विरुद्ध इस अभागे को आश्रय देकर संसार के सामने नया आदर्श रखा है । वास्तव में आप मनुष्य नहीं देवता हैं ।

शाह:—यह आप क्या कहते हैं । मैं यदि तुम्हारी मदद न करता तो अपने आपको मनुष्य नहीं राक्षस समझता । मुझमें देवतापन का कोई गुण नहीं है । मैं तो साधारण मनुष्य हूँ । जिस सिद्धान्त और आदर्श के लिए आपने अपना जीवन इस विपत्ति की आँधी और तूफान में डाल दिया है, वह आदर्श मुझे अत्यन्त प्रिय है । मैं मुसलमानों के दिलों से धार्मिक कट्टरता का अन्त चाहता हूँ । मैं चाहता हूँ कि मुसलमान देखें कि जो हिदायतें कुरान शरीफ में दी गई हैं वे ही हिन्दुओं के वेद और उपनिषदों में हैं । इनमें और

उनमें फ़र्क ही क्या है, और यदि हो भी तो धर्म के नाम पर जन्मभूमि के टुकड़े तो हम न करें। हम मुसलमानों को क्यों बार बार यह याद दिलाया जाता है, कि हम बाहर से आये हैं। हिन्दुस्तान हमारी जन्म-भूमि नहीं है। कभी हमारे बुजुर्ग बाहर से आये थे, इसीलिए क्या हमें इस देश को अपना नहीं समझना चाहिए।

दारा—मेरा तो दृष्टि-कोण ही और है। मैं तो मनुष्य-मात्र को एक समझता हूँ। हम जो मुसलमान कहाते हैं, आदिम आर्यों के वंशज हैं। जब इस्लाम का प्रादुर्भाव नहीं हुआ था, तभी हिन्दुस्तान के सूर्य-वंशी और चंद्र-वंशी राजाओं ने अफ़ग़ानिस्तान, ईरान, अरब और तुर्किस्तान में अपनी राज्य-सत्ता स्थापित की थी, अपने धर्म का प्रसार किया था। मुसलमान तो उन्हीं क्षत्रियों की सन्तान है। आज धर्म के परिवर्तन से वह रक्त का सम्बन्ध तो नहीं भूला जा सकता। भारतवर्ष सदा से अपना था और सदा अपना रहेगा। हम पहले भारतवर्ष के हैं, पीछे अरब और तुर्किस्तान के। हम इसे पराया कैसे समझें ?

(एक सैनिक का प्रवेश ।)

सैनिकः—(कोर्निस कर के) एक सिपाही यह पत्र लाया है (पत्र दारा को देता है)

द्वारा:—(पत्र पढ़ कर) तुम उस सिपाही को ठहराओ ।

(सैनिक का सलाम करके प्रस्थान)

तो शाहनवाज़खाँ साहब, मेरी किस्मत का पाँसा मानो फिर बदलना चाहता है । यह बीजापुर तथा दक्षिण की दूसरी मुसलमानी रियासतों की तरफ़ से मुझे निमन्त्रण-पत्र है । वे विश्वास दिलाते हैं कि मुझे दिल्ली का सम्राट बनाने के लिए हरतरह के ख़तरे उठाने को वे तैयार हैं ।

शाहनवाज़:—दक्षिण के मुसलमानों पर अभी औरङ्गज़ेब का जादू नहीं चला है, इसीलिए वे यह अनुभव करते हैं कि दिल्ली के तख्त पर हिंदू-विरोधी व्यक्ति को बैठाने का अर्थ है मुसलमानों के भविष्य को सदा के लिए अंध-कार पूर्ण कर देना । तिस पर वे समुद्री मार्ग से आने वाले विदेशी व्यापारियों की गति-विधि को भी पहचानते हैं । जानते हैं कि यदि यहाँ हिंदू और मुसलमानों में ग्रह-युद्ध चलता रहा तो दोनों इन्हीं व्यापारियों की दासता के पाय में फँसेंगे, इसीलिए वे चाहते हैं कि दिल्ली के सिंहासन पर वही व्यक्ति आसीन हो जिस पर हिन्दुओं और मुसलमानों का समान रूप से विश्वास हो ।

द्वारा:—पर मुझे तो मुसलमानों का विश्वास प्राप्त नहीं हुआ !

शाहजहाँ खां—ऐसा आप क्यों कहते हैं ? माना कि आप लाहौर के मियाँ मीर और उनके अनुयायी मौलाना शाह-बदख्शी के मुरीद हैं । आप अब कादिरिया सम्प्रदाय को पसन्द करते हैं, फिर भी क्या आप मुसलमान नहीं हैं ? पञ्जाब के सूबेदार दाऊदखाँ को आपने औरङ्गजेब के षड़यन्त्र और अपने भोलेपन से गँवा दिया, फिर भी ऐसे समझदार मुसलमानों की कमी नहीं जो आपका साथ दें ।

(सैनिक का प्रवेश)

सैनिकः—(कोर्निश करके) एक और सिपाही यह खत लाया है । (खत दारा को देता है ।)

दाराः—(खत पढ़कर सैनिक से) उस सिपाही के छहरने का भी प्रबन्ध कराओ ।

(सैनिक का सलाम करके प्रस्थान)

यह शिवाजी का खत है । उन्होंने भी मुझे अपने पहाड़ी प्रदेश में आमंत्रित किया है । वह लिखते हैं, प्राणों को तुच्छ समझने वाले, महाकाल से भी लोहा लेने वाले मराठे आपको अपना सम्राट मानने को प्रस्तुत हैं, बल्कि आपको दिल्ली के सिंहासन पर आसीन करना अपने जीवन का चरम

कर्तव्य समझते हैं। हमें मुसलमानों से विरोध नहीं, लेकिन हिन्दू-विरोधी नीति का सूत्रपात करने वाले औरङ्गजेब के हाथ में साम्राज्य की शक्ति हम बर्दाश्त करने को तैयार नहीं। बोलो शाहनवाज़ खाँ साहब, आपकी क्या राय है ?

शाहनवाज़:—इससे अच्छी बात और क्या हो सकती है ! आत्म-रक्षात्मक युद्ध करने के लिए दक्षिण से अच्छा स्थान क्या हो सकता है ? जामनगर के महाराणा साहब भी अपना सर्वस्व आप पर न्योछावर करने को प्रस्तुत हैं। उन्होंने अपनी पुत्री का विवाह सिपरशिकोह से करने का भी निश्चय प्रकट किया है।

बारा:—मैं महाराणा की इच्छा का विरोध कैसे कर सकता हूँ। जिसे संसार में कहीं सहारा नहीं था उसे उन्होंने सहारा दिया है। औरंगजेब की चढ़ती हुई शक्ति की अवहेलना करके अपने अस्तित्व को भी खतरे में डालकर अतिथि-धर्म का पालन किया है, मैं उनकी किसी इच्छा का विरोध नहीं कर सकता। अच्छा, अब हम उन सिपाहियों को उचित उत्तर देकर बिदा करें।

(दोनों का प्रस्थान)

पट-परिवर्तन

चौथा दृश्य

[समय—रात्रि का प्रथम प्रहर । स्थान—रोशनआरा का कमरा । रोशनआरा और दासी बातें कर रही हैं ।]

दासी:—आपने सुना, औरंगजेब ने मुराद को भी गिरफ्तार करके ग्वालियर के किले में भेज दिया है ।

रोशन:—हाँ, सब सुनती रहती हूँ । सब देखती रहती हूँ । किंवदंती का चक्र जब एक बार चल पड़ता है तो वह कहाँ रुकेगा, कब रुकेगा यह बड़े-बड़े ज्योतिषी भी नहीं बता सकते । जब बाँध टूट जाता है तो उसके प्रवाह का नियंत्रण नहीं किया जा सकता । जो सामने आता है उस भयानक प्रवाह का शिकार हो जाता है । रोशनआरा की ईर्ष्या ने जो गृह-युद्ध की ज्वाला प्रज्ज्वलित कर दी है, क्या वह बिना सर्वनाश किए रुकेगी । उसमें सब जलेंगे । मुराद ग्वालियर में बन्द है, शुजा की शक्ति समाप्त हो चुकी ही समझो । दारा दर-दर मारा-मारा फिर रहा है । रह गई जहानारा । वह ज़िन्दगी भर अपना सूना जीवन लिए कराहती रहेगी । और जो जलाने वाले हैं वे भी अपनी आग से स्वयं जलेंगे !

दासी:—अब तो अभागें दारा का पीछा छोड़ना चाहिए ।

राशन:—तुम भोली हो, हम सोचते हैं दारा की दिल्ली और लाहौर में भी पराजय हुई। आज उसके पास न धन है न सेना। वह एक साधारण आदमी से भी अधिक कंगाल, निर्बल और साधनहीन है। लेकिन यह हमारा भ्रम है। दारा की शक्ति आज भी क्षीण नहीं हुई। आज भी वह राजपूतों के दिलों में राज करता है। औरंगजेब की तलवार की चमक देख कर जो सर झुकते हैं वे दारा की केवल एक चितवन पर चढ़ जाते हैं। दारा के प्रति जनता के हृदय में स्नेह है उसे औरंगजेब की तोप-तलवारें कब तक दबाए रख सकेंगी। दारा जंगल में भी जा खड़ा होगा तो उसे अनुयायियों की कमी न पड़ेगी। मैं समझती थी मैं जहानारा और दारा का अभिमान चूर्ण करूंगी लेकिन आज मेरा ही अभिमान चूर्ण होगया। लोग मुझे भय की दृष्टि से देखते हैं, अहं और प्रेम से नहीं। मेरी ओर उठने वाली आँखों में एक तीक्ष्ण व्यंग, एक गहरी घृणा और एक अजीब उपेक्षा-सी नज़र आती है। सच बात कहूँ तो कभी-कभी मेरा हृदय भी मुझे कोसता है।

दासी:—क्या आपको पश्चाताप हो रहा है ?

रोशन:—पश्चाताप ! नहीं ! पतन के पथ पर जो पैर पड़ गया। वह ऊपर नहीं उठ सकता। औरंगजेब, वह भोला मनुष्य !

दुनिया उसे धूर्तराज कहती है, लेकिन कोई यह नहीं जानता कि उसका दिमाग कौन है। वह युद्ध में तलवार चलाने के सिवा क्या जानता था। मैंने उसे ईर्ष्या की भाषा सिखाई, मैंने उसे धर्म को शास्त्र बनाना सिखाया। आज वह विश्व पर मुझसे कहीं आगे बढ़ गया है। उसने जो-जो किया उसकी मुझे कल्पना भी न थी। वह भोला है, वह शायद यह भी नहीं जानता कि वह अपराध कर रहा है।

दासी—अब भी गलती सुधारी जा सकती है।

रोशन—नहीं ! मनुष्य गलती छिपाने का यत्न करता है, सुधारने का नहीं। गलती छिपाने के लिए और गलती करता है। अब पथ नहीं बदला जा सकता। उज्जैन और शम्भू-गढ़ में जिन सहस्रों राजपूतों का रक्त बहा है, उनके बलिदान को क्या हिंदू जाति भूल जावेगी। चिरकाल तक उसके हृदय में यह आग सुलगती रहेगी। मुगल—साम्राज्य की विशाल इमारत की नींव हिल गई है। उसकी दीवारों में दरारें पड़ गई हैं। अब उसे किस चीज़ से जोड़ा जाय !

(औरंगज़ेब का प्रवेश और दासी का प्रस्थान)

औरंगः—रोशनबारा !

रोशनः—आओ भैया ! दारा के क्या समाचार हैं ।

औरंगः—उसके दिन फिर फिरे हैं ।

रोशनः—किस तरह ?

औरंगः—मेरे ससुर शाहनवाज़ ख़ाँ की महारवानी से !

रोशनः—ससुर अपने दामाद का दुश्मन ! अजीब बात है ।

औरंगः—तुम भी इसे अजीब बात कहती हो, रोशन ! जब भाई-भाई, बहन-भाई और बाप-बेटे एक दूसरे का सर चाहने लगे तो सभी कुछ हो सकता है । यह दुनिया है, यहाँ सब कुछ हो सकता है ।

रोशनः—अब स्थिति क्या है ?

औरंगज़ेबः—बहुत गम्भीर ! शाहनवाज़ख़ाँ के आग्रह पर जाम-नगर के महाराणा ने दारा का आदर के साथ स्वागत किया । सिपर सिकोह के साथ महाराणा ने अपनी लड़की की शादी करके दारा से अपना सम्बन्ध चिरस्थायी बनाया है ।

रोशनः—इन विपत्ति के दिनों में भी दारा ने अपने पुत्र का विवाह किया है ।

औरंगः--विवाह क्या यह तो राजनीतिक गठ-बन्धन है ।

रोशनः--अभी तक हिन्दू राजाओं में दारा का साथ देने का हौसला है ।

औरंगः--इतना ही नहीं दक्षिण से शिवाजी की ओर से दारा को सहायता देने का संदेश आया है । बीजापुर आदि मुसलमानी रियासतें भी दारा का साथ देने को तैयार हैं । महाराज जसवन्त सिंह ने तो खजवाहा में ही, जब हम शुजा से युद्ध कर रहे थे, हमारे तम्बू लूट कर अपना गुस्सा उतारा था ।

रोशनः--अगर यह सब मिल गये तो दारा का पैर मजबूत हो जायेगा ।

औरंगः--इसीलिए तुम्हारे पास आया हूँ । लाहौर में दाऊद खान के सहयोग से दारा का दल जब अत्यन्त बलवान हो गया था तब तुम्हीं ने चिट्ठी लिखने की सलाह देकर मुझे विजय का मार्ग दिखाया था ।

रोशनः--तो तुमने दर असल खत लिखदिया था ।

औरंगः--हाँ, मैंने दाऊद खान को लिखा था, तुम्हारा पत्र मिला । तुम्हारी सलाह के मुताबिक मैं सेना भेज रहा हूँ । आशा

है तुम ठीक समय पर दारा के अस्त्र-शस्त्रों पर अधिकार कर लोगे ।” पत्र इस तरह भेजा कि वह दारा के हाथ लगे । यही हुआ । दारा ने विश्वास-पात्र सेनापति दाऊद खाँ को अपमानित करके बिदा कर दिया । कुछ ऐसी ही तरकीब अब करनी चाहिए ।

रोशनः—दारा ने क्या निश्चय किया है ।

औरंगः—महाराज जसवन्त सिंह ने उसे राजपूताना में बुलाया है । और वह अजमेर जा रहा है ।

रोशनः—तो जसवन्त सिंह को ही फोड़ लो । महाराजा जयसिंह को भेजकर उन्हें थोड़ा सब्जबाग दिखाकर ठण्डा करदो । वह अस्थिरचित्त राजपूत थोड़ा सम्मान पाकर दारा की सहायता करने से विरत हो जावेगा । यह अच्छा हुआ जो दारा ने दक्षिण न जाकर जसवन्तसिंह का निमंत्रण स्वीकार किया । दक्षिणी मुसलमानी रियासतों और शिवाजी की सहायता से दारा क्या न कर गुज़रता ?

औरंगः—तुम मेरे साथ चलो तो इस विषय में अच्छी तरह सोच लिया जावे ।

(दोनों का प्रस्थान)

पट—परिवर्तन ।

पाँचवाँ दृश्य

[समय-दोपहर । स्थान-जंगल । एक पेड़ के नीचे दारा और नादिरा ।]

नादिरा:—(पेड़ की छाया में बैठ जाती है) अब नहीं चला जाता ।

बड़ी प्यास लगी है । आह ! पानी ! पानी !!

(लेट जाती है ।)

दारा:—पानी ! नादिरा, इस जंगल में दूर तक कहीं पानी नहीं है । थोड़ा और चलो, प्रिये ।

नादिरा:—और कितना चलें, कब तक चलें । बहुत तो चल चुके । क्या जीवन के पथ का अभी अंत नहीं आया । आह ! एक वह दिन था जब बहुमूल्य शराब पानी की तरह हमारे यहाँ बहती थी, एक यह दिन है, जब एक बूंद पानी के लिये तरसना पड़ रहा है । बसुंधरा कितनी कठोर हो गई है, क्या हमारे लिये उसके अन्तर में एक बूंद भी जल नहीं । आकाश कितना नीरस हो गया है, क्या हमारे लिये उस के पास जल का एक भी कण नहीं है ।

दारा:—यह सब मेरा ही अपराध है ।

नादिरा:—इस में तुम क्या कर सकते हो , प्रियतम ! तुम मेरे लिये एक क्षण के लिये भी कठोर नहीं हुए । तुम्हारी

आँखों में अब भी मेरे लिये बहुत पानी है । राज-भवन छूट गये । हाथियों और घोड़ों की पीठें हमारा विश्राम-भवन बनीं, किस्मत ने वह भी न रहने दिया । अब जंगल के काँटों और कंकरो से भरी भूमि ही हमारी सुख-सेज है ।

द्वारा:---यह सब भाग्य का खेल है, नादिरा ! ऐसी भंयकर बीमारी में भी तुम ने ज़रा भी मुझे उलाहना नहीं दिया, इन विपत्ति के दिनों में भी तुम्हारा इलाज न करा सका । इधर तुम्हारा शरीर ज्वर के ताप से जलता था, ऊपर घोर ग्रीष्म की दोपहर का सूर्य प्रचंड किरणों से प्रकृति के कण-कण को व्याकुल कर रहा था, तिसपर पीछे से हमारा पीछा करने वाली औरंगज़ेब की सेना से गोले बरसते थे । तुम ने तब भी कभी धैर्य नहीं छोड़ा । राम के लिये सीता ने जो कष्ट सहे, मेरी सीता तुम ने क्या उस से कम सहे

नादिरा—बड़ी से बड़ी विपत्ति में भी तुम ने मुझे अपने साथ रखा है, इससे बड़ा सौभाग्य एक नारी को क्या मिल सकता है ? मैं बहुत सुख से तुम्हारे चरणों में अपने प्राण त्याग सकूंगी, प्रियतम ! हमने जीवन भर सत्य का पथ नहीं छोड़ा । इस आत्मिक सुख के आगे दिल्ली क्या संसार का साम्राज्य भी तुच्छ है । हमने प्रलोभनों में फँस कर वा विपत्ति

से ढर कर अपने आदर्शों को नहीं छोड़ा । अब हम इस दुनिया को छोड़ भी दें तो हमें विश्वास है कि हमारा आदर्श जिएगा ।

दारा:—उठो नादिरा ! थोड़ा और चलने से हम हिन्दुस्तान की सीमा के पार पहुँच जायेंगे । मुझे विश्वास है किसी दिन बादशाह हुमायूँ की भाँति फिर नई सेना लेकर आ सकेंगे । औरंगजेब को दण्ड देने योग्य शक्ति हमें प्राप्त होगी ।

(नादिरा उठने का यत्न करती है लेकिन उठ नहीं पाती)

नादिरा:—आह, पानी ! थोड़ा पानी मिल जाय तो शायद कुछ चल पाती !

(नेपथ्य में गान)

नाविक नौका को खे चल ।

यद्यपि जर्जर तरङ्गी तेरी ।

नभ में छाई घोर अँधेरी ।

सर पर मृत्यु लगाती फेरी ।

फिर भी तू नौका ले लच ।

नाविक, तरङ्गी को खे चल ।

चलते जाना लक्ष्य तुम्हारा ,

बहना ही है यहाँ किनारा ,

फिर क्यों यात्री हिम्मत हारा ।

हँस-हँस जीवन-बलि दे चल ।

नाविक, नौका को खे चल ।

दारा:—वह कौन गा रहा है । (बैठकर नादिरा का सर अपनी गोद में रख लेता है ।) स्वर कुछ परिचित सा जान पड़ता है ।

(गाते गाते वीणा और प्रकाश का प्रवेश)

दारा:—तुम वीणा ! और तुम बाबा !!

प्रकाश:—तुम युवराज दारा ! मैं यह क्या देख रहा हूँ । हे विधाता, क्या तेरा यही न्याय है । आज संसार में न्याय, स्नेह और मनुष्यता का पद-पद पर अपमान हो रहा है । स्वार्थ, कपट और हिंसा फल-फूल रहे हैं । भगवान् तुम वास्तव में कुछ हो ! अगर हो तो तुम्हारा न्याय-दण्ड कहाँ गया । भूकंप, हैजा, महामारी, तूफान, आँधी बज्र, और प्रलय आज कहाँ है ? इस संसार को नष्ट क्यों नहीं कर देते, महाकाल !

दारा:—तुम यह क्या कह रहे हो ! एक व्यक्ति के दुख से दुखी होकर सम्पूर्ण संसार को अभिशाप न दो ।

प्रकाशः—तुम एक व्यक्ति हो दारा ? नहीं दारा तुम सम्पूर्ण मनुष्यता हो, तुम्हारी पराजय सम्पूर्ण मानव-जाति और ईश्वरीय शक्ति की पराजय है, युवराज ! तुम पर औरंगजेब की विजय अन्याय की न्याय पर, पाप की पुण्य पर, स्नेह की विद्वेष पर, और शैतान की खुदा पर विजय है ।

बादिराः—पानी ! पानी !!

बीणाः— पानी ! थोड़ा पानी मेरे पास है ।

(पानी देती है)

बादिराः—(पानी पीकर बैठ जाती है) तुमने मेरे प्राण बचा लिए, बीणा !

बीणाः--जिन्होंने सारे संसार के प्राणों की रक्षा करने का बीड़ा उठाया है, उनके प्राण एक घूंट पानी के लिए इस बीहड़ जंगल में तरसें यह विधि की बिडम्बना ही है ।

प्रकाशः--युवराज, मैंने तो सुना था आप अजमेर में हैं । महाराज जसवंतसिंह ने आपको निमन्त्रित किया था न !

दारा--उसी निमन्त्रण ने मेरा सर्वनाश कर दिया । जब मैं जामनगर में था, मुझे दक्षिण की रियासतों ने सहायता का वचन दिया था । मैं उधर जाने का विचार कर ही रहा

था कि महाराज जमवंतसिंह का राजपूताना आने का निमंत्रण मिला किन्तु जब मैं अजमेर पहुँचा तो महाराज मेरी सहायता को न आए । महाराज जयसिंह ने उन्हें रोक लिया । औरंगज़ेब पूरी तैयारी के साथ पहुँचा था । मुझे बिना राजपूतों की सहायता के उससे लड़ना पड़ा । औरंगज़ेब के ससुर शाहनवाज़खाँ ने मेरी ओर से प्राणों की बाजी लगा कर युद्ध किया । पहले तो औरंगज़ेब की सेना के पैर उखड़ गए, लेकिन औरंगज़ेब एक ही धूर्त है । उसने रिश्वत देकर मेरे तोपखाने को अपनी ओर भिला लिया । अपने ही आदमियों के विश्वास-घात ने मुझे भागने के लिये मबूज़र किया । नादिरा को मैंने पहले ही फाही सागर के पास भेज रखा था । भागते समय इसे भी साथ न ले सका । न जाने कितने जंगलों, रेगिस्तानों और पहाड़ों में टकरें खाते हम दोनों मिल पाए हैं । शेष सभी साथी छूट गये । सारा धन लुटोरों ने लूट लिया । अब तो मैं तुम से भी ज्यादा कंगाल हूँ ।

प्रकाश:—तुम संसार में सब से अधिक धन वाले हो, दारा ! तुम भारत के हृदय सम्राट हो । युग-युग तुम्हारा भारत पर राज्य रहेगा, युवराज ! भारत की राष्ट्रीय एकता के लिये तुम्हारा प्रयत्न इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखा जावेगा । अभी क्या

विगड़ा है। तुम्हें धन की ज़रूरत नहीं। भारतवासी तुम्हारे लिये प्राणों की बलि देना अपना कर्तव्य समझते हैं। भारत के प्रत्येक घर का धन तुम्हारा है। भारत की जनता तुम्हारा बल है। यदि आज हमारे पास शस्त्र भी न हों तो भी केवल बलिदान की शक्ति से हम अत्याचार, अनाचर पर विजय पावेंगे। अब भी बहुत कुछ हो सकता है। तुम हो तो धन भी आजावेगा - सेना भी जमा हो जावेगी !

दारा:—जब तक साँस है तब तक आशा है। इन कष्टों ने मुझे हताश नहीं किया है। अन्तिम क्षण तक मैं प्रयत्न करूंगा। अभी मुझे अपने अपराधों का पूरा प्रायश्चित्त करना है। बाबा, आज तुम से मेरी जो भेंट हुई, उसे मैं खुदा की कृपा की एक किरण समझता हूँ। मैंने आज तक जो कुछ किया वह मेरी आत्मा की पुकार पर किया। दुनियां शायद मुझे मुसलमान न माने, इसका मुझे ज़रा भी खेद नहीं, पर मैं तुम से सच कहता हूँ मैं सच्चे इस्लाम का भक्त हूँ, उस इस्लाम का जिसकी भाँकी मुझे, खुदा उन्हें शांति दे, मेरे पीर स्वर्गीय मियाँमीर और उनके शिष्य मौलाना शाह बदखशी के चरणों में बैठ कर मिली है। मुसलमान 'एक' पर ईमान रखता है। 'अनेक' पर नहीं। वह सिवा खुदा के किसी और का अस्तित्व स्वीकार नहीं करता।

दुनिया के ज़र्रे-ज़र्रे में उसी एक को उसी खुदा को, देखता है । वह अपने अन्दर जो दुर्बलतायें हैं उनके खिलाफ जहाद करता है, लेकिन बाहर की दुनिया को प्रेम से जीतता है । उसका हृदय इतना विशाल है जितना कि खुदा का विस्तार है और जब वह अपने आपको पूर्ण रूप से जान पाता है तो देखता है कि वह स्वयं खुदा है । यह दुनिया और इस दुनिया में सब कुछ सिवा खुदा के कुछ नहीं है । बाबा, मेरी राय में यही इस्लाम है और यही हिन्दुओं का वेदान्त है । मैंने इसी सिद्धान्त के लिये इतना कष्ट सहा है । जीवन के अन्तिम पल तक इसी के लिए संघर्ष करूंगा । मैंने गीता को भी पढ़ा है, उसका फ़ारसी में अनुवाद भी किया है । मैं कर्म के तत्व को मानता हूँ । फल की मुझे चिन्ता नहीं है । (नादिरा से) चलो, नादिरा अब हम चलें !

प्रकाशः--इस समय कहां जाओगे ? पास ही मेरी कुटी है । आज वहीं विश्राम करो !

(सब का प्रस्थान)

पट-परिवर्तन

छठा दृश्य

[स्थान—आगरा का किला । शाहजहाँ बच्चों को पढ़ा रहा है । शाहजहाँ के पास रंगों की प्यालियाँ तूलिका और कड़े हाथ की बनी हुई तसवीरें पड़ी हैं । सामने बच्चे तसवीरें बना रहे हैं ।]

शाहः—(पास बैठे हुए एक बच्चे के पास जाकर) देखें, तुमने क्या बनाया है ?

एक बच्चाः—गुलाब का फूल !

शाहः—ठीक अब इस में पत्तियाँ बनाओ उसके नीचे डंडी में काँटे बनाओ । तभी तो तस्वीर पूरी होगी, बेटा । जैसे संसार में सुख-दुख साथ रहते हैं, उसी तरह गुलाब के पेड़ में फूल होते हैं और काँटे भी । (दूसरे बच्चे का कागज़ देख कर) तुमने क्या बनाया ?

दूसरा बच्चाः—यह एक नदी हैं ।

शाहः—ठीक ! लेकिन इस में एक भँवर बनाओ, उस में एक नाव फँसाओ । जैसे सुखी से सुखी मनुष्य की ज़िंदगी बिना किसी दुर्घटना के समाप्त नहीं होती, उसी तरह बेटा नदी का बल भँवर के बिना नहीं जान पड़ता । (तीसरे बच्चे से) तुमने क्या बनाया ?

तीसरा बच्चा:—समुद्र !

शाह:—ठीक ! इस में तूफ़ान का दृश्य बनाओ । लहरों में डूबता हुआ जहाज़ दिखाओ । मनुष्य के जीवन में कभी ऐसा तूफ़ान उठता है जिसमें उसके सब मनसूबे डूब जाते हैं ।
(चौथे बच्चे से) तुमने क्या बनाया है ।

चौथा बच्चा: - बिल्ली और उसके बच्चे ।

शाह: - लेकिन तुमने एक बच्चा बिल्ली के मुँह में क्यों दे दिया है ।

चौथा बच्चा:—बिल्ली अपने बच्चे को खा जाती है । जब उस के बच्चे पैदा होते हैं तो उसे बड़ी भूख लगती है, उस वक्त उसे खाने को न मिले तो अपने ही बच्चे को खा जाती है ।

शाह:—तुम ऐसे जानवर को जानते हो जिसके बच्चे बड़े हो कर अपने माँ-बाप को खा जते हैं । नहीं तुम नहीं जानते । तुम जानोगे, जब मेरे जैसे बूढ़े हो जाओगे, जब तुम्हारे बेटे औरंगज़ेब की तरह जवान होंगे । अच्छा जाओ आज की पढ़ाई खतम ।

(सब बच्चों का प्रस्थान)

शाह: यदि मनुष्य हमेशा ही बच्चा रह सकता, यदि वह अभिलाषाओं के जाल में अपने जीवन को न उलझाता, तो दुनिया कितनी सुन्दर हो जाती। मैं अपने दुखी दिल को इन बच्चों से बहलाना चाहता हूँ।

(रोशनआरा का प्रवेश)

रोशन:---अब्बा ! (कंठावरोध)

शाह:---तुम हो रोशन ! किननी मुहत वाद तुम आई हो,
और मुँह से बात भी नहीं करती !

रोशन:---(पास बैठ कर) अज्जा !

शाह:---(हाँखों में आसू भर कर) बेटी !

रोशन:---आप मुझे माफ़ कर दें !

शाह:---तुमने क्या अपराध किया है ?

रोशन: --आप सब जानते हैं। मैंने आज तक अपने आपको धोखा दिया। मन को बहुत समझाया, लेकिन अपराध की ज्वाला चैन नहीं लेने देती। मर्द काफ़-धंधों में अपना इतिहास भूल सकता है, लेकिन स्त्री क्या करे उसके पास तो इतना काम नहीं है कि अपने गुनाह, अपना दुख-

दर्द भुला सके। मेरा तो जी करता है मैं आत्म-हत्या कर लूँ। अब्बा, आपने कैसे इतने आघात बर्दाश्त किए ?

शाहः—इन रंग की प्यालियों, इन कूचियों और इन कागजों से। मैं इन कागजों पर अपने दर्द की तस्वीर खींच कर हलका हो जाता हूँ। ये ललित कलाएँ न हों तो संसार में आत्म-हत्या करने वालों की संख्या बढ़ जाय। बेटी, यदि वेदना को बाहर निकलने को जगह न मिले तो हृदय फट जाय।

रोशन—तो आप ने मुझे माफ़ किया, अब्बा !

शाहः—बेटी, तुम मेरी सन्तान हो ! तुम गुनाह करो तब भी मैं तुम्हारा भला ही चाहूँगा। जो होना था हो गया। आगे भी यदि तुम प्रेम से हिल-मिल कर रह सको तो मैं सुख से मर सकूँगा।

रोशनः---मैं कोशिश करूँगी। लेकिन औरंगजेब ! वह तो अब मेरा कहा भी नहीं मानता !

शाहः---बुदा की गर्जनी पूरी हो ! मेरे ज़िन्दगी के दिन तो किसी न किसी तरह पूरे हो जायेंगे, लेकिन तुम इस बात का खयाल रखना कि मुगल-शक्ति को विदेशियों के आगे झुकना

न पड़े। खलो बेटी, जहानारा इंतज़ार कर रही होगी।
मेरी ये प्यालियाँ, ये तस्वीरें ले खलो।

(रोशनझारा सब सामान उठानी है। दोनों का प्रस्थान।)

पट्ट-परिवर्तन

सातौं दृश्य

[स्थानः—हुमायूँ का मकबरा। जहानारा अकेली खड़ी है।

उसकी आँखों से आँसू बह रहे हैं।]

जडाः—यद् हिंदू-मुस्लिम-ऐक्य के लिए अपने साम्राज्य की भी परधा न करने वाले स्वर्गीय-सम्राट हुमायूँशाह का मकबरा है। आज इसी में दारा को भी सुला दिया जावेगा। राष्ट्रीय एकता के लिए बलि होने वाले शहीद के सोने के लिए यही उपयुक्त स्थान है। दारा ! आखिर तुम्हें दुनिया से जाना ही पड़ा। शायद यह दुनिया भले आदमियों के लिए नहीं है। यहाँ वही रह सकता है जो पक्का जालसाज, भूठा, ढोंगी, बेईमान और दगाबाज है। मनुष्यता का कैसा पतन है ?

(नेपथ्य में गान ।)

स्वप्न मेरा खो गया रे

कौन उसको खोज लाए ?

गीत गुंजा था घड़ी भर

मोहनी ले विश्व भर की ।

दिल विकल हो रो रहा है

कौन फिर वह गीत गाए ?

स्वप्न मेरा खो गया रे

कौन उसको खोज लावे ।

बल दिया, लेकर दिया वह

था फरिश्ता एक आया ।

कौन इस तममय निशा में

राह हमको अब दिखाए ।

स्वप्न मेरा खो गया रे

कौन उसको खोज लाए ।

हाय, जिसके लोचनों से

प्रेम का दरिया बहा था ।

खूट कर वह चल दिया है,

कौन उसको अब मनाए ।

स्वप्न मेरा खो गया रे

कौन उसको खोज लाए ?

आज वीणा रो रही है

तार टूटे जा रहे हैं ।

सौंस सहसा रुक रही है

कौन अब धरिज बैधाए ।

स्वप्न मेरा खो गया रे

कौन उसको खोज लाए ।

बहा:—यह तो वीणा का स्वर है ।

(गाते-गाते वीणा और प्रकाश का प्रवेश ।)

प्रकाश:—शाहजादी जहानारा !

बहा:—हाँ, बाबा, मैं ही हूँ । तुम लौट आए !

प्रभाशः--हाँ, लौट तो आया लेकिन भारत के सौभाग्य को लौटा कर न ला सका !

जहाः--कल तुम दिल्ली में थे--बंशी दारा का तुमने जुलूस देखा था ।

वीणाः--नहीं देखा यह अच्छा ही हुआ । वह दृश्य देखकर क्या जिंदा रहा जा सकता था ?

जहाः--मनुष्य को क्या नहीं सहना पड़ता । वीणा, इन्हीं ब्रेहया आँखों से कल दारा को एक मैली-कुचैली छोटी-सी हथिनी पर खुले हुए होदे में बैठा देखा था । उसके पीछे उसका छोटा बेटा सिर सिकोह थ । उसके पीछे नंगी तलवार ताने जल्लाद नज़ बेग बैठा था । बाबा, वह दृश्य भुलाए नहीं भूलना । प्राणों में काँटे सा चुभ रहा है, अंगारे सा धधक रहा है । इन्हीं दिल्ली की गलियों में किस शान से दारा की सवारी निकलती थी, यहीं यात्रा से मैले हुए, फटे चीथड़ों में, सर पर मोटी सी पगड़ी रखे दारा को गुज़रना पड़ा । सारा नगर शोक के समुद्र में डूब गया । बच्चे-बूढ़े, स्त्री-पुरुष, सभी रो रहे थे । ऐसा कौन था जिसकी आँखों से आँसू नहीं बहे । सारे शहर में हाहाकार मच गया । प्रत्येक नागरिक यह अनुभव करता था जैसे स्वयं उसके

साथ कोई भयंकर दुर्घटना घटी हो । आज भी मानो दिशाएँ रो रही हैं ।

बीणा:—रहने दो फूँकी मैं यह सब न सुन सकूंगी ।

जहा:—तुम नहीं सुन सकोगी, बेटी, तो मेरे दिल में जो इतना शोक भरा पड़ा है, वह किसके दिल में उतारूँ ।

प्रकाश:- तुम कहो, बेटी, मैं सुनूँगा ।

जहा:- अपमान और वेदना के कारण दारा ने सर ऊँचा नहीं किया । केवल एक बार उसने आँखें उठाकर देखा था, जब एक भिखारी ने कहा, “युवराज दारा, तुम जब पहले इधर से गुजरते थे तब कुछ न कुछ देते थे । आज ता तुम्हारे पास कुछ नहीं है ।” दारा ने अपनी आँखें उठाई । भिखारी की तरफ देखा । कंधे से चादर उतार कर उसे दे दी ।

प्रकाश:—(आँखें पोछते हुए ।) धन्य हो दारा ! युग-युग तक जमाने के हृदय में तुम्हारा नाम लिखा रहेगा । तुमने भारत को जो कुछ दिया है, उसका वह सदा उपकार मानेगा । तुम मर कर भी अमर रहोगे ।

जहा:—फिर बाबा जलूस के बाद न्याय का खेल हुआ । बड़े-बड़े मौलवी और काज़ी बैठे, सरदार बैठे । सब ने दारा को

धर्म का दुश्मन बता कर उसे मौत की सज़ा दी। ज़ज़ाद ने उसके बेटे सिपर सिकोह को बल-पूर्वक दूसरे कमरे में बन्द कर दिया। कैसा करुण था वह दृश्य ! पर दारा की आँखों में आँसू का एक कण भी न था। इस्लाम के नाम पर जो यह नृशंस कार्य हुआ है, इसे हज़रत मोहम्मद खुद देखते तो क्या कहते ? उधर सिपर चीखता रहा और ड़धर दारा का कत्ल किया गया। (आँखों में आँसू, कण्ठावरोध ।)

प्रकाशः—जितना विश्वास-घात लोगों ने दारा के साथ किया, उतना शायद ही कभी किसी के साथ किया हो। पता है वह कैसे गिरफ्तार हुए थे।

जहाँः—नहीं !

प्रकाशः—मलिक जीवन का नाम शायद तुम ने सुना हो। बोलन दर्रे के पास ही दादर नामक स्थान का वह जागीरदार है। सम्राट ने एक बार उसे मृत्यु-दंड सुनाया था तब दाराने उसकी रक्षा की थी। वही मलिक जीवन दारा को सपरिवार अपने घर ले गया था। नादिरा की वहाँ मृत्यु हो गई। नादिरा ने कहा था मेरा मजार हिन्दुस्तान की भूमि में ही बनाना। मुझे यहाँ न दफ़नाना।

जहाः— धन्य है नादिरा का देश-प्रेम !

प्रकाशः— वह हिन्दुस्तान के सर्व-प्रिय सम्राट अकबर की पोती और कोमल हृदय शहाजादा परवेज की लड़की न ठहरी । दारा ने उसका जनाजा लाहौर के लिये रवाना किया । अपने सभी विश्वस्त आदमी जनाजे के साथ भेज दिये । स्वयं बोलन दर्रे के रास्ते अफगानिस्तान होकर ईरान जाने का इरादा किया । नादिरा की मृत्यु ने उनके साहस की कमर तोड़ दी थी, फिर भी उन्हें आशा थी ईरान जाकर वहाँ के बादशाह से मद लेंगे, लेकिन कृतघ्न मलिक जीवन ने उन्हें और सिपर सिकोह को गिरफ्तार करके महाराज जयसिंह के पास भेज दिया । अपनी जान बचाने वाले की जान लेने को तैयार हो गया । उसके उस कृत्य पर मनुष्यता चिरकाल तक लज्जित रहेगी ।

जहानाराः— मनुष्यता का ऐसा पतन कहीं सुना है, कहीं देखा है !

यह संसार क्या अब भी रहने योग्य है !

प्रकाशः— रहना तो पड़ेगा ही ?

जहानाराः— वह देखो दारा का जनाजा आ रहा है ! सिर्फ चार उठाने वालों के सिवा उसके साथ कोई नहीं है । उसने अपने राजपूत मित्रों का श्मशान चुका दिया है । आज आस-

मान में एक नक्षत्र की वृद्धि हुई है। वह अपने तीव्र प्रकाश से प्रत्येक रात हिन्दुस्तान को ही नहीं संपूर्ण संसार को मनुष्यता और प्रेम का सङ्गीत सुनावेगा। समय के प्रवाह में दिल्ली का लाल किला बचेगा या नहीं, आगरा का ताजमहल रहेगा या नहीं, यह हुमायूँशाह का मकबरा भी बचेगा या नहीं, इसे कौन जाने, लेकिन जब तक चाँद-सूरज रहेंगे दारा की स्मृति हिन्दुस्तान के हृदय में घर किए रहेगी। बिना कोई रस्म अदा किए यहीं हुमायूँशाह के पास उसे दफ़ना दिया जायगा।

(जनाज़ा आता है। उसे उठाकर रखा जाता है। प्रकाश और वीणा उसपर फूल चढ़ाते हैं।)

जहानारा:—हा दारा ! (पछाड़ खाकर जनाज़े के पास गिर पड़ती है। बेहोश हो जाती है।)

प्रकाश:—आज एक महान स्वप्न-भङ्ग हो गया। क्या राष्ट्रीय एकता के लिये एक महात्मा का बलिदान व्यर्थ जायगा। क्या दारा का स्वप्न सदा स्वप्न ही बना रहेगा ! क्या भारत की भावी पीढ़ियाँ इस महान बलिदान को भूल जावेंगी। इस मकबरे में सोने वाली दो महान आत्माएँ पुकार-पुकार कर क्या कह रही हैं ? हिन्दुस्तान क्या तू इस आवाज़ को सुनेगा ! सुनकर कुछ करेगा।

[जहानारा होश में आती है । प्रकाश उसे
सहारा देकर उठाता है । जहानारा
खड़ी हो जाती है ।]

प्रकाश:—मुझे क्षमा करना, बेटी ! आज तुम्हें शाहजादी न कह कर बेटी कहने को जी कर रहा है । वह पूर्ण पुरुष दारा — जो न केवल मुसलमानों का, न केवल हिन्दुओं का, बल्कि सारे संसार का प्रकाश-स्तम्भ था — जिसका व्यक्तित्व देश-काल की सीमा के पार पहुँच चुका था, मुझे एक धरोहर दे गया है, वह मैं तुम्हें सौंप रहा हूँ । (हस्त लिखित किताबों का एक बड़ा बंडल जहानारा के हाथ में देता है ।) दारा ने ये पुस्तकें देते हुए कहा था, इस बण्डल में संस्कृत से फ़ारसी में किया हुआ उसका गीता और ५० उपनिषदों का अनुवाद है, यही उसकी अपने मुसलमान भाइयों को दैन है । इन्हें पढ़ कर वे हिन्दुओं को जाने । गीता और उपनिषदों के अनुवादों के अतिरिक्त एक पुस्तक में उनकी हिन्दी कविताओं का संग्रह है, यह उनकी हिन्दुओं को भेंट है । उसके अतिरिक्त एक प्रति उनके जीवन भर के स्वाध्याय और साधना का परिणाम, उनकी रिसाला-ए-हक़नुमा पुस्तक है । इसमें सच्चे धार्मिक तत्त्वों का वर्णन है । यह उनका संसार को अनमोल उपहार

है । जो दारा को देखना चाहें वे उन्हें इन पुस्तकों में देखें ।
 इस भ्रम और अन्धकार से भरे भव-सागर से पार उतरने
 का मार्ग पावें । यहाँ न कोई हिन्दू है न मुसलमान—केवल
 उस 'एक'—उस खुदा—उस ब्रह्म का अलग-अलग घट में
 प्रतिविम्ब है । हम छाया के लिये लड़ रहे हैं और वास्तव
 को भूल रहे हैं । यही उस पूर्ण पुरुष दारा का सन्देश है ।

वीणा:—(तान छेड़ती है ।)

स्वप्न मेरा खो गया रे,

कौन उसको खोज लाए ।

पटा-त्तेप



